समरथ

जुलाई-अगस्त 2012 ◆ नई दिल्ली

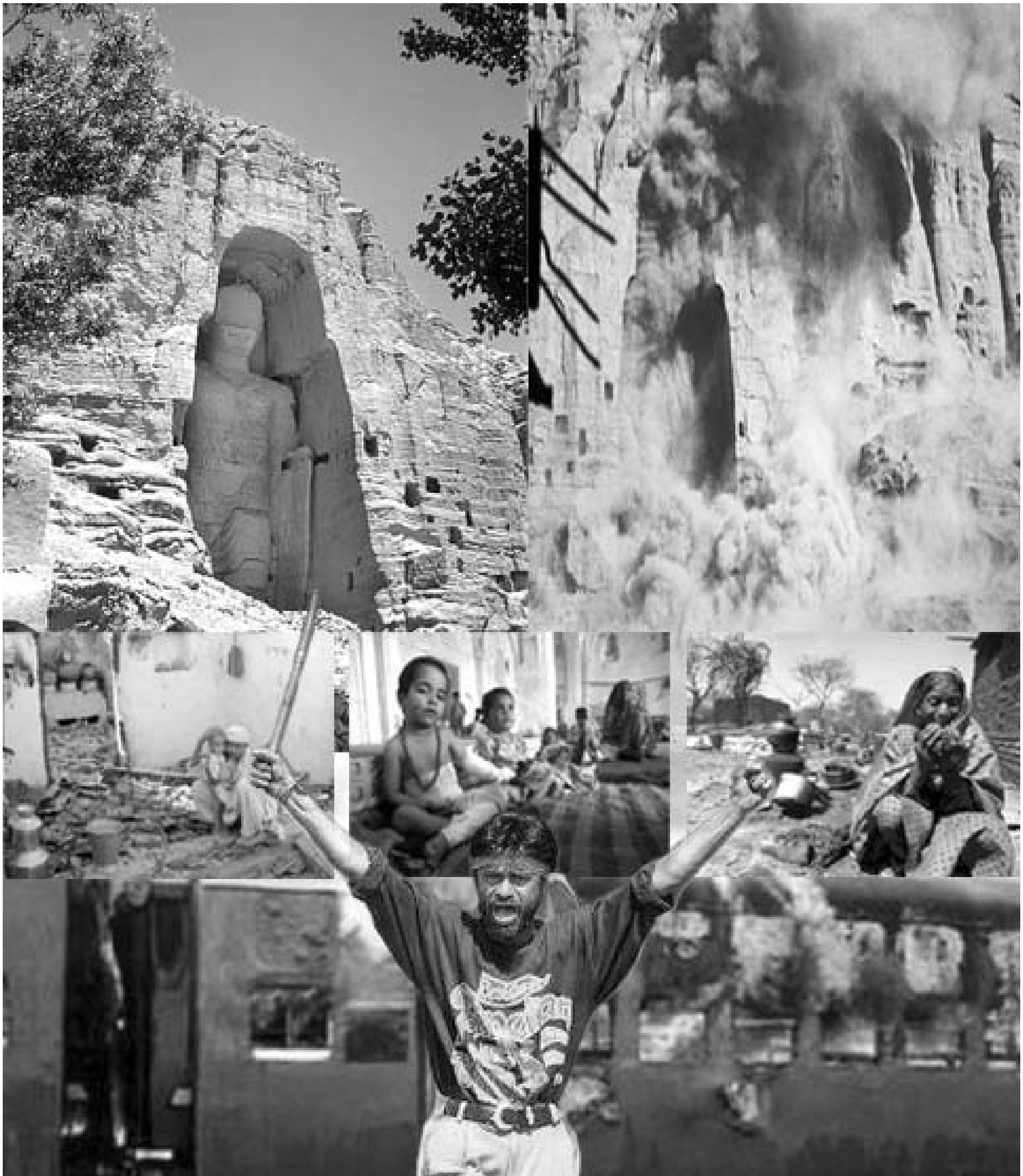

नाहि तो जनम नसाई

प्रस्तुत अंक में हम जानी-मानी कवयित्री रानू उनियाल की एक कविता पेश कर रहे हैं जो कि मूलतः अंग्रेजी में है और इस कविता के साथ गायत्री मंत्र और उसका अनुवाद। सबसे पहले गायत्री मंत्र और उसका अनुवाद पेश करने का औचित्य क्या है इस पर दो शब्द। अक्सर हम जीवन भर अपने धर्म से जुड़े किसी मंत्र, श्लोक, आयत का उच्चारण करते रहते हैं बिना उसके अर्थ की तह में गए। हम केवल आस्था में डूब कर आंख बंद करके कुछ ऐसी चीज़ों को धर्म के अंधे कुएं में कैद कर देते हैं जो दरअसल धार्मिक कम और हर धर्मों से जुड़े ईश्वर की स्तुति ज्यादा होती हैं। यही बात गायत्री मंत्र के साथ है। इसके अर्थ में जाया जाए तो किसी धर्म विशेष से इसका कुछ भी लेना-देना नहीं है।

रानू उनियाल अंग्रेजी साहित्य में जाना-माना नाम है और लखनऊ विश्वविद्यालय में प्रोफेसर के ओहदे पर काम कर रही हैं। हाल ही में रानू उनियाल का कविता संग्रह 'December Poems' प्रकाशित हुआ। इसी पुस्तक से ली गई 'A Duststorm in the middle of the night' एक सुंदर कविता है रानू उनियाल की, जिसका हिंदी अनुवाद यहां दिया जा रहा है।

शब का तूफ़ान क़यामत सा था

■ **रानू उनियाल**

ज़र्द और सुरमई एक शाम की तारीकी में
खुद से शरमाई हुई रौशनी के दामन में
आसमां के सभी तारे भी पशेमान से थे
अपने चेहरों को नकाबों में छिपाए से थे
अपनी गैरत को भुला कर भी बहुत फ़ख्र में था
आसमान दूर तलक फैला देव-पैकर सा
बरहना जिस्म खुली बाँहों से दावत देता
चाँद को खिलने पे उकसाता सा बहलाता सा
हवा खामोश थी ऐसे जैसे कोई नग़मा खामोश
जैसे वाक़िफ़ हो कि धरती का समां है कैसा
जैसे गुमनाम गुनाहों से पटी हो धरती
दूर तक खून पसीने में सनी हो धरती
अश्क के एक समंदर में दबी हो धरती
शब् की तारीकी में कुछ राज़ लिए हो धरती
हामेला पेट में भी भूक के साये लरज़ाँ
अधखुले जिस्म में बच्चों की दर्दमंद ज़बां

चाँद से जिस्म ज़िनाकारों की जब भेंट चढ़े
घर पे खाविंद न था जो कि कोई आह सुने
गोधरा आग में लिपटा तो लपट फ़ैल गयी
बामियाँ बुद्ध के आंसू में सराबोर हुई
इन्तेक़ाम आग में बारूद में पैकर ले कर
कितने अनजान फ़रिश्तों के जवां सीने पर
मौत बन कर जो गिरे उसकी कहानी न बनी
कितने बचपन थे कि फिर उनकी जवानी न पली
रेलगाड़ी में जो बारूद का अम्बार गिरा
कितनी ही कोख जलीं कौन मरा क्या है पता
ज़िंदगी है कि कभी सह न सकी अपनी शिकस्त
सारे मंझधार से तूफानों से भी टकरा कर
कोख जो माँ की थी, फितरत की थी, जीवन की थी
माँ थी वह धरती पे पलते हुए इंसानों की
कोई बेटा कोई वालिद कोई रहबर कि सिपाही कोई
कोख में पलते हैं और उस से जनम लेते हैं
कोख बस कोख नहीं माँ है और उसका है सवाल
कब तलक कोख जलेगी यह समझना है मुहाल
सालेहा साल की तारीख भी कैसी तारीख
वही बेरंग से क़िस्से वही उलझी तारीख
ठंडी बारिश न उम्मीद न सूरज की किरण
कोई खुर्शीद संवारेगा कभी सुबह की जुल्फ
या कि फिर गर्क अंधेरों में रहेगी हर सुब्ह
(अनुवाद : खुर्शीद अनवर)

गायत्री मंत्र

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

बख्शा मुझे तूने वजूद मेरे खुदा मेरे खुदा
हर दर्द की तू है दवा, मेरे खुदा मेरे खुदा
रहमत की बारिश भी है तू खुशियाँ भी तेरे नाम से
तू रौशनी, तू ज़िंदगी, दानिश कदा, मेरे खुदा
है तेरे आब-ओ-ताब से बख्शिश गुनाहों को मेरे
रस्ता दिखा और इल्म दे मेरे खुदा मेरे खुदा
(अनुवाद : खुर्शीद अनवर)

नगड़ी की लड़ाई से उभरे राजनीतिक संदेश

■ प्रवीण

सवाल है कि क्या झारखंड वाकई संविधान के नियम-कानूनों द्वारा संचालित हो रहा है या इसे नियंत्रण करने वाली या इस पर शासन करने वाली शक्तियां देश के संविधान से भी ऊपर हैं। अगर नहीं तो नगड़ी में मेहनतकश किसान जनता और राजसत्ता के बीच ऐसी टकराव की नौबत क्यों आन पड़ी है। क्यों नगड़ी के ग्रामीण अप्रैल-मई के महीने में भीषण तपिश-लू और मूसलाधार बारिश, कड़कती आसमानी बिजलियों के बीच भी अपनी ज़मीन बचाने को डटे रहे और क्यों 10 हज़ार से अधिक ग्रामीण ढोल, मांदर, नगाड़े, तीर-फरसा-भाला लेकर नगड़ी से 18 किलोमीटर दूर राजधानी रांची में राजभवन घेरने पहुंचे। बीते पांच महीनों से झारखंड की जनता की नज़रें नगड़ी पर टिकी हैं कि यह मसला राज्य के भविष्य का राजनीतिक मसौदा तैयार करेगी और विकास की चालू अवधारणाओं को मुख्यमंत्री आवास, सचिवालय, विधानसभा से बाहर जनता के बीच तय करने को मजबूर करेगी। जब सरकार झारखंड की जनता को रोजी-रोटी नहीं मुहैया करा पाती तो उसे क्या हक है कि किसानों की ज़मीन छीनकर उन्हें बेघर-बार, बेरोज़गार बनाकर दर-दर की ठोकरें खाने को विवश किया जाए। न तो लोकतांत्रिक व्यवस्था इसकी इजाज़त देती है और न ही झारखंड के संबंध में बने ढेरों स्थानीय कानून। तो क्या वजह है कि झारखंड में सरकार न तो लोकतंत्र का पालन करती है और संविधान को भी खारिज करती है। नगड़ी का आंदोलन कोई तुरंत उभरा प्रतिवाद नहीं है। यह राजनीतिक गोलबंदी भी एक झटके में सामने नहीं आई है। इस तरह के विस्थापन विरोधी जन प्रतिवादों की पृष्ठभूमि आज़ादी के बाद से ही शासन द्वारा किये गए ऐतिहासिक अन्याय के नज़ारों से तैयार हुई है। नगड़ी इसका ताज़ा उदाहरण है लेकिन यह विस्थापन के विरोध में उपजे आंदोलन में नवीनतम श्रृंखला है। नगड़ी आंदोलन के संकेत इसलिए भी व्यापक हैं क्योंकि यह राजधानी से सटा इलाका है और शहरी चकाचौंध को नज़दीक से देखने वाला भी। इसके बावजूद अगर लोग विरोध कर रहे हैं कि हमें किसान ही रहने दिया जाए तो विकास के संदर्भ में इसके व्यापक मायने निकलते हैं। 50 के दशक में ही रांची में हैवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन की स्थापना की गई थी। करीब तीन दर्जन गांव उजाड़े गए थे और कहा गया था कि आपकी कुर्बानियों की कीमत पर ही शक्तिशाली भारत का उदय होगा। आज साठ सालों बाद इस सवाल को नगड़ी की जनता ने फिर से बहस में ला दिया है कि और कितनी कुर्बानियों के बाद शक्तिशाली देश और राज्य का उदय होगा। और अपनी कुर्बानियां किस वर्ग की जनता के लिए दें। और क्या उस राज्य-देश के बाशिंदे हम मेहनतकश और गरीब किसान जनता भी हैं। इसका जवाब झारखंड में बीते छह दशकों में उजाड़े गए 30 लाख लोगों के रूदन और विलाप के इतिहास में छुपा है। क्या वह विलाप सरकार के कान को भेदने में सक्षम हो रहे हैं या उस पर बाहरी शक्तियों ने रूई डाल दी है। इसे झारखंड की जनता समझ चुकी है कि राज्य और देश की सरकारें कठपुतली मात्र हैं और उनका नियंत्रण पूंजीपतियों, कंपनियों के हाथ में है। नगड़ी की जनता ने अपनी दृढ़ राजनीतिक चेतना का मज़बूत प्रदर्शन किया है और अपने बूते अन्यायपूर्ण कदमों और झूठे तर्कों को खारिज करने का साहस दिखाया है।

नगड़ी का जन उभार यों ही नहीं है, यह 30 लाख उन पूर्व विस्थापित झारखंडियों की राजनीतिक आवाज़ का नेतृत्व भी है। इसे समझे बगैर अब लोग अपनी ज़मीन से हिलने वाले नहीं। पुनर्वास के नाम पर हुए धोखों से तप चुकी झारखंड की जनता सरकारी तर्कों को खारिज कर रही है और जवाब में सरकार निरुत्तर होने पर बंदूक, फौज और पुलिस का सहारा ले रही है। क्या ये पुलिस और फौज सरकार में बैठे लोगों की निजी सेनाएं हैं जो संविधानेत्तर जाकर निर्दोष ग्रामीणों पर लाठियां चलाती हैं और उसे राज्यपाल-मुख्यमंत्री को ज्ञापन सौंपने तक से बंदूक की नोंक पर रोका जाता है। जब लोकतांत्रिक व्यवस्था में शासन का चरित्र ऐसा हो जाए तो भला कोई उस पर भरोसा क्यों करे। नगड़ी के ग्रामीणों को भी यह अहसास है। पेसा कानून-1996 जिसमें साफ दर्ज है कि कोई भी ज़मीन ग्राम सभा की अनुमति के बगैर नहीं ली जा सकती है। तो कैसे उस ज़मीन को सरकार जबरन छीनने पर आमादा है। इतना ही नहीं छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम में ग्रामीणों की ज़मीन संरक्षा के प्रावधानों को धता बताते हुए खुद सरकार संविधान का उल्लंघन कर रही है। समता जजमेंट के तर्कों को भी इस संदर्भ में न तो न्यायालय देखने को तैयार है और न ही सरकार।

तर्क दिया जा रहा है कि शिक्षण संस्थान नहीं बनेंगे, उद्योग नहीं लगेंगे तो राज्य का विकास कैसे होगा। मगर इस बात को कैसे गुमशुदा किया जा सकता है कि झारखंड देश ही नहीं पूरे दक्षिण एशिया में सबसे पहले औद्योगिक क्रांति अपनाने वाला क्षेत्र है और यहां की जनता ही सबसे अधिक भुखमरी, कुपोषण, बेरोज़गारी, पर्यावरण संकटों, सामाजिक-सांस्कृतिक अराजकता, अशिक्षा झेलने वाले बनकर रह गए हैं। टाटा का कारखाना 1907 ई. में लगा। इसके बाद बिड़ला, सेल, सी.सी.एल., बी.सी.सी.एल., एच.ई.सी., उषा मार्टिन ने कारखाने लगाये। इससे स्थानीय लोगों के जीवन में

कितनी खुशहाली आयी, इस पर तर्क-वितर्क करने का साहस सरकार और विकास एजेंसियों में नहीं है। तभी तो ज़मीन अधिग्रहण के लिए सीधे फौजी कार्रवाई कराने पर सरकार तुली है। पांच हजार लोगों के रोज़गार सृजन के नाम पर 25 हजार लोगों को उजाड़ना कैसा विकास मॉडल है। नगड़ी की जनता का सवाल यही है और जनांदोलन के द्वारा वे इसे अभिव्यक्त भी कर रहे हैं। अब तक जितने उद्योग यहां लगे हैं क्या उनमें विस्थापितों और स्थानीय लोगों को चपरासी के सिवा भी कोई नौकरी दी गई है। इसका बहाना बनाया जाता है कि झारखंडी जनता अनपढ़ और अनस्किल्ड है। पर इसके लिए सरकार दोषी है या झारखंड की गरीब जनता, जिन्हें हर बार तंग-तबाह किया जाता रहा है कभी कल-कारखाने लगाने के लिए, कभी डैम-जलाशय, कभी सरकारी कार्यालय बनाने के नाम पर।

दूसरी बात यह कि राज्य में जो पहले से शिक्षण संस्थाएं मौजूद हैं, उनका हाल क्या है। तकनीकी संस्थाओं में तो दूर सामान्य डिग्री कॉलेजों में भी 60-70 प्रतिशत तक शिक्षकों की कमी है। भवन जर्जर हैं, छात्रवास टूटे हैं, लैब-लाइब्रेरी तक की व्यवस्था नहीं है। सत्र नियमित नहीं हैं। शिक्षकों की योग्यता संदेह के घेरे में है। खुद शिक्षामंत्री के गृह जिले में डिग्री कॉलेज नहीं है। बिरसा कृषि विश्वविद्यालय में प्राचार्य नहीं हैं। मेडिकल कॉलेज में प्रोफेसर नहीं हैं। ऐसे में इन संस्थाओं को सुदृढ़ और प्रभावी बनाने का काम पहले हो न कि कमीशन-भ्रष्टाचार की खेती के लिए नए-नए प्रोजेक्ट बनाए जाएं। और क्या आई.आई.एम. या लॉ यूनिवर्सिटी झारखंड के बच्चों के लिए है। जिस राज्य में प्राथमिक शिक्षा के बाद 50 प्रतिशत ड्रॉप आउट केवल इसलिए हो जाता है क्योंकि औसतन 10 किलोमीटर की परिधि में मिडिल और हाई स्कूल नहीं होते। प्लस टू स्तरीय स्कूल तो दूर की बात है। ऐसे में निचले स्तर पर एजुकेशनल इंफ्रास्ट्रक्चर है ही नहीं और उच्चतर और पेशेवर शिक्षा के लिए ग्रामीणों को उजाड़ने का मसौदा तैयार करना संदेहास्पद है। लॉ और प्रबंधन पाठ्यक्रमों में न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता स्नातक (इंटीग्रेटेड कोर्स अपवाद) है। झारखंड में मौजूद कितने छात्र उस स्तर की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पाते हैं जो इन संस्थाओं में दाखिला ले सकेंगे। और क्या झारखंड की गरीब जनता अपने बच्चों को इतने महंगे संस्थानों में पढ़ाने की क्षमता रखते हैं जिनका जीवन दो जून की रोटी में ही उलझा हो। मतलब साफ है कि झारखंडियों को इसलिए उजाड़ा जा रहा है ताकि वहां पूंजीपतियों, अफसरों, नेताओं के बच्चे पढ़ सकें।

इन साजिशों को झारखंड के लोग अब समझ चुके हैं और ग्रामीण बीते दो साल से लगातार नगड़ी के विस्थापन के खिलाफ लड़ रहे हैं। उन पर लोगों को भड़काने के आरोप में मुकदमा दर्ज कराया जाता है। और जब जनांदोलन अपने चरम पर पहुंच जाता है तब राजनीतिक चेहरे अपनी रोटी सेंकने, नगड़ीवासियों के हमदर्द बनने का आलाप करते हैं। झारखंड में विस्थापन को लेकर नेताओं की संवेदनशीलता का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि तीन महीने तक बच्चे-बूढ़े-जवान, महिलाएं, सब अपना काम छोड़कर दिन-रात नगड़ी में उस जगह पर डटे रहे जो ज़मीन उनसे छीनी गई थी। इस क्रम में लू लगने से दो महिलाओं समेत तीन लोगों की मौत भी हो गई। इसके बावजूद नेताओं-मंत्रियों ने नगड़ी जाकर मामले को समझने की ज़हमत तक नहीं की। एक तरफ सत्ता की एक पार्टी झामुमो के अभिभावक गुरु जी कहते हैं कि खेत किसानों का है, इस पर हल चलाओ लेकिन मुख्यमंत्री इस पर चुप्पी साधे रहते हैं। यह शासन का कौन सा चेहरा है। बहरहाल, नगड़ी की लड़ाई अब झारखंड में विकास की अवधारणाओं का रुख तय करने की ओर बढ़ रही है।

अदालत के सामने सरकार जान-बूझकर वास्तविक तथ्य नहीं रख रही है। हाईकोर्ट बार एसोसिएशन के पी.आइ.एल. पर कड़ा रुख लिए हुए है। विधानसभा में बहस होती है लेकिन नतीजा नहीं निकलता। सवाल यह नहीं है कि शिक्षण संस्थान खुलेंगे या नहीं बड़ा सवाल यह है कि अवैध ज़मीन अधिग्रहण और पुलिस बल के आधार पर उसे बनाया जाएगा। गांव के लोगों ने विकल्प के रूप में बंजर ज़मीन का प्रस्ताव दिया लेकिन इसे कोर्ट और सरकार दोनों ने अनसुना कर दिया है। इसका मूल कारण वे 106 एम.ओ.यू. हैं जिन्हें बड़ी कंपनियों को लाने के लिए किया गया है। उनका बड़ा दबाव है कि ज़मीन वापस नहीं की जाए। उन्हें भय है कि जिस प्रक्रिया में उन्होंने ज़मीन ली है उसे भी कहीं वापस न करना पड़े। क्योंकि लगभग ज़मीन जबरन लेने की कोशिश की गयी है और पूरा झारखंड जबरन भूमि अधिग्रहण के खिलाफ संघर्ष कर रहा है। कोयला क्षेत्र में जबरन अधिग्रहण के लिए अर्द्धसैनिक बल उतार दिया गया है। झारखंड एक तरह से एक ऐसे क्षेत्र में तब्दील कर दिया गया है जिसमें कानून और संविधान का महत्व नहीं रह गया।

झारखण्ड एक विशिष्ट राज्य है, जहां 32 विभिन्न तरह के आदिवासी समुदाय निवास करते हैं, जिनकी अपनी अद्‌भुत संस्कृति है। उनकी संस्कृति, आजीविका एवं अस्तित्व प्राकृतिक संसाधन, जल, जंगल और ज़मीन पर आधारित है। छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम 1908 में आदिवासियों की परंपरा, संस्कृति एवं रीति-रिवाज़ को कानून से ऊपर माना गया है। ऐसी स्थिति में भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की विभिन्न धाराओं का हवाला देते हुए उनकी ज़मीन को नहीं छीना जा सकता है। झारखण्ड सरकार, रांची के कांके प्रखण्ड स्थित नगड़ी मौजा की 227 एकड़ ज़मीन विकास एवं जनहित के नाम पर आदिवासियों से ज़बरदस्ती छीनने की कोशिश कर रही है। इस मामले में अगला निर्णय लेने से पहले कुछ पहलुओं पर विचार की ज़रूरत है।

1. विशेष क्षेत्र के लिए विशेष कानून : भारत देश में दो तरह के कानून बनते रहे हैं सामान्य कानून एवं विशेष क्षेत्र, समुदाय व परिस्थिति के अनुरूप विशेष कानून। लेकिन हमेशा देखा गया है कि विशेष कानूनों के रहते हुए भी केन्द्र एवं राज्य सरकारें अपनी

ज़रूरतों के हिसाब से सामान्य कानूनों को लागू करने में ज़्यादा दिलचस्पी लेती हैं और विशेष कानूनों को दरकिनार कर दिया जाता है, जो सरासर गलत है। देश का कोई भी सामान्य कानून (जनरल लॉ) विशेष कानून (स्पेशल लॉ) को अभिभावी (ओवरराइड) नहीं कर सकता है। 5 जनवरी, 2005 को सुप्रीम कोर्ट ने इरिडियम इंडिया टेलिकॉम लिमिटेड बनाम मोटोरोला के मामले में फैसला सुनाते हुए कहा कि जब भी सामान्य कानून एवं विशेष कानून के बीच विवाद हो, तब विशेष कानून ही हमेशा लागू होगा। झारखण्ड में देखा जाये तो छोटा नागपुर टेनेंसी एक्ट 1908 एक विशेष कानून है, जिसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 31-बी तथा नौवीं अनुसूची की मान्यता प्राप्त है। इसलिए इस कानून के सभी प्रावधान संवैधानिक हैं एवं देश का कोई भी सामान्य कानून इसे अभिभावी (ओवरराइड) नहीं कर सकता है।

भूमि अधिग्रहण कानून 1894 एक सामान्य कानून है जो पूरे देश में लागू है वहीं सी.एन.टी. एक्ट विशेष कानून है जो संपूर्ण छोटा नागपुर में लागू है एवं नगड़ी मौजा इसी क्षेत्र में आता है। इसलिए झारखण्ड सरकार नगड़ी के रैयतों की ज़मीन को सी.एन.टी. एक्ट की धारा-50 के तहत ही अधिग्रहण कर सकती है। राज्य सरकार द्वारा नगड़ी गांव की 227 एकड़ ज़मीन को भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के तहत 1957-58 में अधिग्रहण करने का दावा न सिर्फ गैर-कानूनी है बल्कि असंवैधानिक भी। झारखण्ड के छोटा नागपुर क्षेत्र में विकास कार्यो के लिए भूमि का अधिग्रहण सी.एन.टी. एक्ट की धारा 50 के तहत ही किया जाना है तथा भूमि अधिग्रहण कानून 1894 सिर्फ मुआवज़ा एवं अदालती कार्रवाई में उपयोग किया जा सकेगा। सी.एन.टी. एक्ट की धारा 50 (2) में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि भूमि अधिग्रहण कानून 1894 सिर्फ मुआवज़ा देने के लिए उपयोग किया जा सकेगा तथा मुआवज़ा नहीं स्वीकार करने वाले रैयत सी.एन.टी. एक्ट की धारा 50 (6) के तहत न्यायालय जा सकते हैं, जिसमें कानूनी प्रक्रिया भूमि अधिग्रहण कानून 1894 भाग-दो के तहत होगी। ऐसी परिस्थिति में झारखण्ड के छोटा नागपुर प्रमंडल में अब तक सरकार द्वारा विकास कार्यो के लिए भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के तहत किया गया ज़मीन का अधिग्रहण अवैध एवं असंवैधानिक है।

2. अत्यावश्यकता (अर्जेंसी) की स्थिति में अधिग्रहण : राज्य सरकार ने नगड़ी के रैयतों की ज़मीन का अधिग्रहण करते समय भी रैयतों के साथ धोखा किया। सरकार यह दावा करती है कि नगड़ी गांव की 227 एकड़ ज़मीन का अधिग्रहण भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा 17 (4) के तहत वर्ष 1957-58 में राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय जो अब बिरसा कृषि विश्वविद्यालय के नाम से जाना जाता है, के विस्तार एवं सीड बैंक बनाने के उद्देश्य से किया गया। अंग्रेजों ने भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा-17 (4) को आपातकाल की स्थिति से निपटने के उद्देश्य से बनाया था। इस धारा के तहत सरकार अत्यावश्यकता (अर्जेंसी) बताकर किसी भी ज़मीन का अधिग्रहण कर सकती है, जिसमें भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा-5 (2) लागू नहीं होता है, जिसके तहत जन-सुनवाई की व्यवस्था है। यहां सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि अगर नगड़ी की ज़मीन को अत्यावश्यकता (अर्जेंसी) की स्थिति में अधिग्रहीत किया गया था तो पिछले 60 वर्षों तक इसका उपयोग क्यों नहीं किया गया? क्या विश्वविद्यालय का विस्तार एवं सीड बैंक का निर्माण अत्यावश्यकता के दायरे में आता है? एवं क्या सरकार ने रैयतों को प्रारंभ में ही धोखा देने का काम नहीं किया?

सुप्रीम कोर्ट ने स्पेशल लीव पीटिशन (सिविल) सं. 8939 वर्ष 2010 देव शरण एवं अन्य बनाम स्टेट ऑफ यूपी एवं अन्य मामले में कहा कि राज्य सरकार द्वारा ज़मीन अधिग्रहण में देरी इस बात को दर्शाता है कि ज़मीन अधिग्रहण में कोई अत्यावश्यकता नहीं थी। सुप्रीम कोर्ट ने यह भी कहा कि भूमि अधिग्रहण कानून 1894 संविधान लागू होने से पहले का कानून है, जो प्रतंत्रता का संचय करता है एवं कठोर कानून है जो लोगों के सम्पति के अधिकार को प्रभावित करता है। सुप्रीम कोर्ट ने यहां तक कहा कि जनहित को लोक कल्याणकारी राज्य की दृष्टि से देखा जाना चाहिए न कि इसको ज्यों का त्यों रखा जाना चाहिए। इस मामले में उत्तर प्रदेश की सरकार ने शाहजहांपुर जिले के पुवायन तहसील अन्तर्गत मोछा ग्राम की 63.93 एकड़ कृषि भूमि को जिला जेल बनाने के लिए भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा-17 (4) के तहत अत्यावश्यकता दिखाकर बिना जन-सुनवाई किये भूमि का अधिग्रहण किया था। सरकार की दलील थी कि शाहजहांपुर की जेल में 511 के जगह पर 1869 कैदी रह रहे हैं एवं यह जेल भीड़-भाड़ वाले इलाके में है इसलिए इसे शहर से दूर स्थापित किया जाना चाहिए। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने सरकार की दलील को सही ठहराते हुए रैयतों की याचिका को खारिज कर दिया था। लेकिन सुप्रीम कोर्ट ने सरकार द्वारा भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के दुरुपयोग को सही पाते हुए रैयतों के पक्ष को सही ठहराया, जिसमें रैयतों ने सरकार पर भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा-17 (4) का दुरुपयोग करते हुए उनकी कृषि भूमि का गैर-कानूनी तरीके से अधिग्रहण करने का आरोप लगाया था।

3. अधिग्रहीत भूमि की वापसी : झारखण्ड के छोटा नागपुर क्षेत्र के लिए विशेष कानून होने के बावजूद सरकार नगड़ी की ज़मीन को भूमि अधिग्रहण कानून 1894 के तहत अधिग्रहीत मानती है वहीं इसी कानून की धारा-48 में यह व्यवस्था रखी गयी है कि ज़मीन का उपयोग नहीं होने कि स्थिति में ज़मीन मूल रैयतों को लौटा देनी चाहिए। राज्य सरकार नगड़ी मोजा की ज़मीन का उपयोग पिछले 60 वर्षों तक नहीं कर सकी इसका मतलब इस ज़मीन पर मूल रैयतों का ही हक बनता है। इसी तरह जब नगड़ी मौजा की ज़मीन का अधिग्रहण माना गया उस समय यह क्षेत्र बिहार में आता था। ऐसी

स्थिति में इस ज़मीन पर बिहार भूमि सुधार कानून 1950 लागू होता है। इस कानून में कहा गया है कि सरकार द्वारा 1972 से पहले अधिग्रहीत ज़मीन का उपयोग नहीं होने पर अधिग्रहीत ज़मीन मूल रैयतों की होगी। सरकार नगड़ी मौजा की ज़मीन को 1957-58 में अधिग्रहण करने के बावजूद 2011 तक इसका उपयोग नहीं कर सकी थी, इसलिए इस कानून के तहत यह ज़मीन रैयतों की है।

4. अधिग्रहीत भूमि का दूसरे उद्देश्य में उपयोग गैर-कानूनी : सरकार यह मानती है कि नगड़ी मौजा की भूमि का अधिग्रहण 1957-58 में राजेन्द्र (बिरसा) कृषि विश्वविद्यालय का विस्तार सीड बैंक बनाने के उद्देश्य से किया था। लेकिन वर्तमान में इस ज़मीन का उपयोग रिंग रोड एवं शैक्षिक संस्थानों के निर्माण के लिए किया जा रहा है, जो भूमि अधिग्रहण के मूल उद्देश्यों के खिलाफ है। भूमि अधिग्रहण ऑर्डिनेंस 1967 के अनुसार अधिग्रहीत ज़मीन का उपयोग दूसरे उद्देश्य के लिए नहीं किया जा सकता है। एच.ई.सी., रांची के मामले में रांची के उपायुक्त श्री सुधीर प्रसाद ने पत्रांक 22113/डी.सी. दिनांक 18/11/1991 द्वारा भूमि सुधार आयुक्त, पटना को पत्र लिख कर कहा कि एच.ई.सी. ने गैर-कानूनी तरीके से 300 एकड़ अधिग्रहीत ज़मीन दूसरे संस्थानों को बेच दी है, जो एम.ओ.यू. का उल्लंघन है इसलिए एच.ई.सी. के खिलाफ कार्रवाई की जानी चाहिए। यह अलग बात है कि अब तक एच.ई.सी. प्रबंधन के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई है, जबकि एच.ई.सी. ने अब तक लगभग 500 एकड़ ज़मीन 35 निजी संस्थानों को उनसे भारी रकम लेकर लीज़ पर बेच दी है।

5. मुआवज़े के खेल में धोखा : जब राज्य सरकार 2008 में रिंग रोड का निर्माण कर रही थी उसी समय पहली बार नगड़ी मौजा का मामला सामने आया। राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानते हुए ग्रामीण रिंग रोड के निर्माण के लिए 13.10 एकड़ ज़मीन देने को तैयार हो गये लेकिन सरकार ने ग्रामीणों को मुआवज़ा देने से इंकार कर दिया। इस पर रैयतों ने झारखण्ड उच्च न्यायालय का दरवाज़ा खटखटाया। रैयतों ने 2009 में रिंग रोड की 13.10 एकड़ ज़मीन को लेकर मुआवज़े की मांग की लेकिन झारखण्ड उच्च न्यायालय ने उसी समय 227 एकड़ को जोड़कर 15 प्रतिशत ब्याज देने की बात कही। यहां भी कानून की अवहेलना की गई। भूमि अधिग्रहण कानून 1894 की धारा-34 के तहत ट्रेजरी में रखे गये मुआवज़े में प्रतिवर्ष 9 प्रतिशत ब्याज देना है लेकिन माननीय उच्च न्यायालय ने भी इस प्रावधान को नज़रअंदाज़ कर दिया एवं सरकार को सिर्फ 15 प्रतिशत ब्याज देने को कहा। इस तरह से 227 एकड़ ज़मीन की कीमत मात्र 1.5 लाख रुपये लगायी गयी। झारखण्ड सरकार अभी भी नगड़ी मौजा की 227 एकड़ ज़मीन, जिसका वर्तमान बाज़ार भाव लगभग 341 करोड़ रुपये है, जिससे सरकारी निबंधन दर पर लेना चाहती है। सरकार का यह कदम रैयतों के जले में नमक छिड़कने जैसा ही है क्योंकि ये लोग पिछले कई महीनों से आंदोलन कर रहे है। रैयत अपनी ज़मीन पर 150 दिनों तक शांतिपूर्ण तरीके से दिन एवं रात धरना दिये तथा लू लगने से तीन महिलाओं की मौत हो चुकी है। अब वे अपनी ज़मीन वापस चाहते हैं।

6. पांचवीं अनुसूची क्षेत्र : झारखण्ड राज्य संविधान की पांचवीं अनुसूची के तहत आता है जहां की शासन व्यवस्था का संचालन करने के लिए संवैधानिक रूप से ट्राइब एडवाइजरी काउंसिल को सर्वोपरि माना गया है। इस काउंसिल का मुख्य कार्य है कि ऐसे सभी मामलों में जो राज्य में आदिवासियों के कल्याण एवं विकास से संबंधित हों राज्यपाल को समय-समय पर सलाह दे। आदिवासी सलाहकार परिषद से विचार-विमर्श के बगैर, राज्यपाल को किसी भी प्रकार का कानून चलाने का अधिकार नहीं है। संविधान में आदिवासी सलाहकार परिषद का कार्य व्यापक है। इसमें कानूनी प्रक्रियाओं के अलावा, नीति-निर्धारण, विकास योजनाओं का पर्यवेक्षण तथा आदिवासी इलाकों में प्रभावी शासन चलाने के लिए भी ज़िम्मेदारी दी गई है। इसका अर्थ यह है कि कोई भी विकास कार्य को संचालित करने एवं इसके लिए ज़मीन अधिग्रहण करने से पहले ट्राइब एडवाइजरी काउंसिल का परामर्श अति आवश्यक है। नगड़ी मामले में सरकार ने काउंसिल से कोई वार्ता नहीं की। इसी तरह काउंसिल को बाईपास करते हुए झारखण्ड में 100 से ज्यादा एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर किये गये हैं।

अनुसूचित क्षेत्र से संबंधित राज्य के राज्यपाल को कानून संबंधी कई अधिकार एवं शक्तियां प्रदान की गई हैं। जिसमें राज्यपाल यह निर्णय लेने के लिए ज़िम्मेदार है कि संसद या विधान मण्डल द्वारा निर्मित कानून अनुसूचित क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है या नहीं। वे जन-अधिसूचना द्वारा यह निर्देश जारी कर सकते हैं कि संसद या विधानमण्डल द्वारा पारित कोई कानून अनुसूचित क्षेत्र या इसके किसी भाग में लागू नहीं होगा या कुछ संशोधनों या अपवादों के साथ लागू होगा। अर्थात राज्यपाल कानून पर रोक या संशोधन कर सकते हैं जो इस क्षेत्र विशेष के लिए उपयुक्त न हों। उन्हें इस मामले में अधिसूचना जारी करने के लिए आदिवासी सलाहकार परिषद अथवा राष्ट्रपति से परामर्श लेने की भी ज़रूरत नहीं है। साथ ही राज्यपाल किसी राज्य में किसी ऐसे क्षेत्र की शांति और सुशासन व्यवस्था बहाल करने के लिए नियम बनाने को अधिकृत हैं। यह अधिकार मूलतः ज़मीन के मामलों से जुड़े आदिवासियों के अधिकारों एवं हितों की सुरक्षा तथा साहूकारों के द्वारा किये जाने वाले शोषण से संबंधित है। बावजूद इसके नगड़ी मामले में राज्यपाल चुप्पी साधे हुए हैं। नगड़ी मामले में राज्यपाल चाहें तो एक जन-सूचना द्वारा इसका हल निकाल सकते हैं एवं भूमि अधिग्रहण कानून 1894 को निरस्त कर सकते हैं।

7. कृषि भूमि एवं बंजर भूमि का खेल : झारखण्ड सरकार

अपनी कृषि नीति में कृषि योग्य भूमि का गैर-कृषि कार्यों में उपयोग करने के खिलाफ है। लेकिन हकीकत में अपनी कृषि नीति के खिलाफ कृषि भूमि का उपयोग गैर-कृषि कार्यों के लिए कर रही है। नगड़ी की कृषि भूमि पर शिक्षण संस्थान खोलना कृषि नीति का उल्लंघन है। वहीं दूसरी ओर सरकार बंजर भूमि को कृषि योग्य भूमि बनाने के लिए करोड़ों रुपये खर्च करती है। क्या यह आम जनता के पैसा का दुरुपयोग नहीं है? विकास कार्यों के लिए बंजर ज़मीन का उपयोग क्यों नहीं किया जाता है? छोटे किसानों के लिए कृषि ही खाद्य सुरक्षा की गारंटी देती है। खेत चला जायेगा तो लोग कहां से खाना खायेंगे? राज्य की बढ़ती जनसंख्या को अनाज उपलब्ध कराने के लिए कौन चिंता करेगा? कृषि योग्य भूमि को गैर-कृषि कार्यों में लगायेंगे तो अनाज कहां से पैदा होगा? क्या विदेशों से अनाज खरीद कर अनाज की कमी को पूरा किया जायेगा? बढ़ती मंहगाई के ज़माने में क्या गरीब किसान विदेशों से आयात किये गये अनाज को खरीदकर अपनी आजीविका चला पायेंगे?

8. ज़मीन का न्यायपूर्ण उपयोग : ज़मीन के न्यायपूर्ण उपयोग के बारे में सोचने की ज़रूरत है क्योंकि ज़मीन एक सीमित संसाधन है और लोगों की ज़रूरत समय के अनुसार बढ़ती ही जायेगी। राज्य सरकार ने जो भी कंपनी विकास के नाम पर जितनी ज़मीन और पानी मांगा है उतना उन्हें देने के लिए एम.ओ.यू. करती है। लेकिन सरकार यह जानने की कभी कोशिश नहीं करती है कि क्या अमुक कंपनी को उतनी ज़मीन चाहिए? उदाहरण के लिए मित्तल कंपनी को एक इंटिग्रेटेड स्टील प्लांट के लिए 25 हजार एकड़ ज़मीन देने के लिए सरकार ने एम.ओ.यू. किया। सवाल यह है कि क्या एक इंटिग्रेटेड स्टील प्लांट के लिए इतनी ज़मीन की जरूरत है? क्या झारखण्ड सरकार राज्य का विकास चाहती है या मित्तल जैसी कंपनियों का साम्राज्य स्थापित करना चाहती है? झारखण्ड का इतिहास बताता है कि अधिग्रहीत ज़मीन का उपयोग नहीं किया जा सका है। एच.ई.सी., रांची ने 7187 एकड़ ज़मीन का अधिग्रहण किया लेकिन सिर्फ 3,885 एकड़ का ही उपयोग कर पायी। इसी तरह बी.एस.एल., बोकारो ने 33,346 ज़मीन का अधिग्रहण किया, जिसमें मात्र 19,187 एकड़ का उपयोग हुआ। इससे स्पष्ट है कि विकास परियोजनाओं के लिए ज़रूरत से ज़्यादा ज़मीन का अधिग्रहण किया जाता है एवं बाद में अधिग्रहीत ज़मीन को गैर-उद्देश्य कार्यों में लगाया जाता है।

9. सरकार की भूमिका संदेहजनक : नगड़ी मामले में राज्य सरकार की भूमिका काफी संदेहजनक लगती है। राज्य सरकार ने न्यायालय को बार-बार गुमराह किया। के.स. 2347/2012 ऑर्डर नं. 3 में कहा गया है कि महाधिवक्ता ने झारखण्ड उच्च न्यायालय को बताया कि नगड़ी की ज़मीन खेती योग्य नहीं है और वहां खेती नहीं होती थी। क्या सरकार यह बता सकती है कि अगर नगड़ी गांव में खेती नहीं होती है तो क्या नगड़ी के लोग पिछले 60 वर्षों तक मिट्टी खा कर ज़िंदा थे? सरकार ने पहले न्यायालय के आदेश का हवाला देते हुए बंदूक के बल पर ग्रामीणों की ज़मीन छीनने की पूरी कोशिश की। लेकिन भयानक जनाक्रोश के बाद झारखण्ड उच्च न्यायालय ने ऑर्डर नं. 4 के तहत सरकार को इस मामले का हल ढूंढने को कहा लेकिन सरकार ने अब तक कुछ ठोस कदम नहीं उठाया सिर्फ दिखाने के लिए उच्च स्तरीय कमेटी का गठन किया। उच्च स्तरीय कमेटी के अध्यक्ष मथुरा महतो बार-बार कहते हैं कि नगड़ीवासियों के साथ अन्याय हुआ और रिपोर्ट कुछ और लिखते हैं। तीन बैठकों के बाद वे समिति की रिपोर्ट के माध्यम से कहते हैं कि 85 प्रतिशत लोग ज़मीन देना चाहते हैं, जबकि रैयतों ने इन बैठकों में सरकार से ज़मीन वापस देने की मांग की है। सरकार ने उच्च न्यायालय को रिपोर्ट नहीं दी ताकि न्यायालय स्वयं निर्णय ले उसके बाद सरकार कहेगी कि उच्च न्यायालय का फैसला है इसलिए हम लागू कर रहे हैं। राज्य सरकार आदिवासियों के हितों की रक्षा हेतु बने कानून को लागू नहीं करती है लेकिन उनके ज़मीन, जंगल और संसाधनों को लूटने वाले कानूनों को लागू करती है। ज़मीन लूटने का सारा खेल पूंजीपतियों के इशारे पर किया जा रहा है।

10. अभिव्यक्ति की आज़ादी का हनन : नगड़ी के मामले में झारखण्ड सरकार ने बार-बार कहा है कि नगड़ी के रैयत सरकार को ज़मीन देने के लिए तैयार हैं लेकिन बाहरी लोग ग्रामीणों को भड़का रहे हैं। सरकार के महाधिवक्ता ने 6 अगस्त 2012 को माननीय उच्च न्यायालय को कहा कि नगड़ी मामले में जब भी सरकार ग्रामीणों के साथ वार्ता के लिए जाती है, बाहरी लोग जिसमें दयामनी बारला, ग्लैडसन डुंगडुंग एवं रतन तिर्की पहुंच जाते हैं एवं ग्रामीणों को भड़काते हैं। इसी तरह माननीय उच्च न्यायालय ने भी अपने आदेशों में विस्तार से कहा है कि बाहरी लोगों ने 1957-58 में भी रैयतों को भड़काया और अब भी भड़का रहे हैं। यह समझना कठिन है कि सम्मानित न्यायाधीशों को यह भी पता है कि 1957-58 में भी बाहरी लोगों ने ग्रामीणों को भड़काया। भारतीय संविधान अनुच्छेद 19 देश के सभी व्यक्तियों को अभिव्यक्ति की आज़ादी देता है। इसलिए कोई भी व्यक्ति अगर दूसरे व्यक्ति के मौलिक अधिकारों का हनन कर रहा है तो उसके खिलाफ आवाज़ उठा सकता है। झारखण्ड सरकार एवं माननीय उच्च न्यायालय ने अभिव्यक्ति की आज़ादी पर भी गंभीर हस्तक्षेप करने की कोशिश की है, जो असंवैधानिक है। यह अभिव्यक्ति की आज़ादी का घोर उल्लंघन है और अगर अभिव्यक्ति की आज़ादी खत्म हो गई तो कोई भी अधिकार लेना संभव नहीं होगा।

ग्लेडसन डुंगडुंग के आलेख के कुछ तथ्य इसमें शामिल किए गए हैं।

अस्थान के बहाने

प्रतापगढ़ जिले के कुंडा तहसील के अस्थान गांव में दलित बालिका के बलात्कार व हत्या के बाद मुस्लिम अल्पसंख्यकों पर सुनियोजित अत्याचार, उत्पीड़न व उनके पलायन की जांच रपट।

जांच कमेटी के सदस्य : *(1.) पूनम, एडवोकेट, महासचिव, प्रगतिशील महिला संगठन, दिल्ली। (2.) खुर्शीद नक़वी, पी.यू.सी. एल., इलाहाबाद। (3.) के.के. राय, उपाध्यक्ष, पी.यू.सी.एल., इलाहाबाद। (4.) आलोक, संयोजक, पी.डी.एस.यू., इलाहाबाद। (5.) शबनम, प्रगतिशील महिला संगठन, इलाहाबाद। (6.) आलोक रंजन, छात्र।*

जांच दल ने 21 व 23 जून तथा 23 जुलाई 2012 की उपरोक्त घटनाओं की जांच कर यह रिपोर्ट जारी की।

जांच का आधार

24 जून और उसके बाद के समाचार पत्रों में छपी खबरों, विभिन्न संगठनों, मुस्लिम अल्पसंख्यकों, समुदाय के बुद्धिजीवियों व सामाजिक कार्यकर्ताओं से मिली जानकारियों के आधार पर संपूर्ण परिस्थितियों की गहरी पड़ताल करने के लिए तथा पीड़ित परिवारों से सीधी बात-चीत कर तथ्य संकलन के लिए 2 अगस्त, 2012 को इलाहाबाद में एक बैठक हुई जिसमें निम्न संगठनों ने भागीदारी की :

1. पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज़
2. प्रगतिशील महिला संगठन
3. प्रोग्रेसिव डेमोक्रेटिक स्टूडेंट्स यूनियन (पी.डी.एस.यू.)
4. जनवादी अधिवक्ता बुद्धिजीवी मंच, इलाहाबाद।

बैठक में पी.यू.सी.एल. के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष श्री रवि किरन जैन की सहमति से एक 'जांच कमेटी' गठित की गयी और तय किया गया कि 4 अगस्त को जांच कमेटी 'अस्थान' गांव का दौरा करेगी और निम्न आधार पर रपट तैयार करेगी-

1. अस्थान गांव का दौरा तथा जले व लुटे मकानों का ब्यौरा
2. पीड़ित परिवारों, व्यक्तियों से बातचीत
3. दस्तावेज़ों, अभिलेखों का अध्ययन
4. पुलिस-प्रशासनिक अधिकारियों से बातचीत
5. समाचार-पत्रों का अध्ययन

लिये गये फैसले के आधार पर 4 अगस्त, 2012 को दिन में जांच कमेटी के निम्न सदस्यों ने अस्थान गांव का दौरा किया।

1. पूनम, 2. खुर्शीद नक़वी, 3. के.के. राय, 4. आलोक, 5. शबनम व 6. आलोक रंजन।

अस्थान गांव

कुंडा तहसील के नवाबगंज थाने में इलाहाबाद-लखनऊ मार्ग पर नवाबगंज थाने के दाहिने जाने वाली सड़क पर करीब 7 किलोमीटर दूर इस गांव में मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदाय के करीब 53 परिवार हैं। सभी बुनकर (जुलाहा) जाति से हैं। ज़्यादातर परिवार के लोग मुंबई में रोज़गार करते हैं या आस-पास के बाज़ार में अपनी रोज़ी-रोटी कमाते हैं। महिलाएं सिलाई का काम और बीड़ी बनाने का काम करती हैं।

घटना की पृष्ठभूमि :

जांच दल को गांव में लोगों से बातचीत कर तथा अन्य स्रोतों से पता चला कि 20 जून की शाम को गांव की दलित बस्ती की 12 वर्षीय लड़की रेखा गांव की सरहद पर स्थित जंगल में मूंग तोड़ने गयी लेकिन वह रात को लौटी नहीं। परिवारों के लोग, खोज-बीन किये लेकिन कोई सुराग नहीं लगा। 21 जून को सुबह उसकी लाश जंगल में मिली। रेखा के शरीर पर चोट के निशान थे और उसके साथ बर्बरतापूर्ण बलात्कार किया गया था। रेखा की मां ने जांच दल को बताया-शाम को मैं जब जंगल में बकरी लेने गयी तो चार मुस्लिम लड़कों को वहां देखा था।

बलात्कार व हत्या के आरोप में दर्ज प्राथमिकी (एफ. आई.आर.) में चार लड़के नामज़द किये गये और उनकी गिरफ्तारी हुई जिनके नाम मो. इमरान (25 वर्ष), मो. सैफ अली (14 वर्ष, सैफ अली स्कूल में पढ़ता है), मो. फरहान (17 वर्ष), मो. हाफिज (17 वर्ष) हैं। गौरतलब है कि 20 की रात में बलात्कार व हत्या की शिकार नाबालिग दलित लड़की की लाश अगले दिन 11 बजे पायी गयी और 23 जून को पोस्टमार्टम के बाद मृतका को उसके परिवार को सौंपा गया।

दलित बस्ती के लोगों से बात करके पता चला कि पुलिस ने इन चारों युवकों के खिलाफ एफ.आई.आर. दर्ज़ कर उनको गिरफ्तार ज़रूर किया पर इससे पहले उसने

मृतका के भाई द्वारा लिखकर पेश की गई शिकायत को चार बार लौटाया और बदलने को कहा। घटना के बावजूद पुलिस तुरंत गांव में नहीं आई। इस व्यवहार के चलते भी दलित बस्ती में पुलिस के प्रति गहरी नाराज़गी है।

जांच दल को बताया गया कि गांव के मुस्लिम युवक अक्सर शिकार खेलने के लिए जाल लेकर दिन में जंगल की ओर जाया करते हैं। घटना की रिपोर्ट में नामज़द होने के बाद ये चारों लड़के गांव छोड़कर फरार नहीं हुए बल्कि प्रधान ने इनको साथ ले जाकर दलित बस्ती के कुछ परिवारों के सामने पेश किया। चारों लड़कों को 22 जून को पुलिस के सामने पेश किया जिन्हें पुलिस ने गिरफ़्तार कर लिया।

दलित बस्ती के लोगों ने जांच दल के सामने पुलिस के विरुद्ध अपना तेज गुस्सा प्रकट करते हुए कहा कि बार-बार जांच होती है, हमारे नाम पूछे जाते हैं और फिर पुलिस आकर हमारे लोगों को मुस्लिम बस्ती पर हुए हमले के आरोप में गिरफ्तार कर ले जाती है। आज भी हमारे 23 लोग जेल में हैं।

अस्थान गांव की मुस्लिम आबादी पर हमला, आगजनी और लूट :

जांच दल जब 4 अगस्त को दिन में अस्थान गांव के मुस्लिम आबादी वाले हिस्से में पहुंचा तो वहां पूरी तरह सन्नाटा था। घटना के 40 दिन बाद भी एक भी परिवार नहीं लौटा था।

जांच दल के बहुत प्रयास करने के बाद 4-5 युवक व एक महिला को बातचीत करने के लिए वहां बुलाया गया। इन प्रत्यक्षदर्शियों व भुक्तभोगियों से बात कर जो पूरी तस्वीर उभरी, वह इस प्रकार है-

23 जून को सुनियोजित व संगठित तरीके से सैंकड़ों की संख्या में लोगों ने गांव के बगल के नहर को पार करते हुए, नारे लगाते हुए मुस्लिम बस्ती में प्रवेश किया और चुन-चुन कर सभी घरों को जलाया। उनके हाथ में पेट्रोल, मिट्टी के तेल के बर्तन थे व रॉड, डंडा, सरिया आदि लिये हुए थे। वे घरों को जलाने, लूट लेने व मुलसमानों को मार डालने के उत्तेजक नारे लगा रहे थे।

भीड़ में 500 से अधिक लोग थे। सारे घरों के दरवाजे तोड़कर पहले जितना सामान लूट सकते थे, उसे लूटा, बाकी को तोड़ा और घर जला दिया।

जांच दल ने एक-एक घर का मुआयना किया और पाया कि सारे घर जले हुए थे। कच्चे मकानों को गिरा भी दिया था। घरों में जले हुए खाट, चौकी, बर्तन, अलमारी, पंखे व अन्य सामान बिखरे पड़े थे।

गांव की मस्जिद में रखा हुआ सामूहिक उपयोग का सामान (देग, बर्तन, दरी) आदि भी लूट लिया गया था। जांच दल को 17 मोटर साइकिलें, 4 फ्रिज व 20 सिलाई मशीन भी लूटे जाने का ब्यौरा मुस्लिम युवकों ने दिया।

इन युवकों के अनुसार ये हमलावर ज़्यादातर गांव के बाहर के लोग थे।

कोटेदार व ग्राम प्रधान का द्वन्द्व :

जांच दल को अपने दौरे में अस्थान गांव के लोगों से बात कर कुछ दिलचस्प तथ्यों का सामना करना पड़ा, जो 23 जून के संगठित हमले पर कुछ प्रकाश डालती है। जांच दल को बताया गया कि हिन्दू बहुमत वाले गांव में इस बार मुस्लिम प्रधान (महिला) चुनी गयी। जिसका गांव के मजबूत लोगों में बहुत मलाल था। इस चुनाव में दलितों ने भी मुस्लिम प्रधान को समर्थन दिया था।

अस्थान गांव की सस्ते गल्ले की दुकान का मालिक (कोटेदार) पिछले तीस सालों से गांव का एक दबंग अवधेश सिंह है। दुकान गांव से करीब 6 किलोमीटर बाहर है और बिना किसी पूर्व सूचना के महीने में एक बार खुलती है। कुछ लोग ही थोड़ा राशन पा पाते हैं। गांव के अधिकांश गरीबों के पास बी.पी.एल. कार्ड नहीं है। पूरे गांव में अवधेश सिंह कोटेदार के खिलाफ गहरा असंतोष व आक्रोश है।

मुस्लिम प्रधान जीतने के बाद कोटेदार के खिलाफ आवाज़ उठनी शुरू हो गयी। आपूर्ति विभाग, उप जिलाधिकारी व जिलाधिकारी को प्रधान द्वारा पत्र लिखकर कोटेदार की शिकायत की गयी और धीरे-धीरे गांव की इसी बस्ती में नियमित दुकान खोलने, कार्डधारकों को राशन देने की मांग भी होने लगी।

जांच दल को बताया गया कि बलात्कार व हत्या के बाद कोटेदार अवधेश सिंह काफी सक्रिय हो गया था और चारों तरफ दौड़कर मुसलमानों को सबक सिखाने की बात कर रहा था। 23 जून के हमले में उसकी भूमिका भी महत्वपूर्ण मानी जा रही है जिसमें पुलिस से पूरा सहयोग प्राप्त हुआ है।

महत्वपूर्ण चित्र है कि मुसलमानों का कहना है कि हमले व आगजनी की घटना से पहले सपा विधायक विनोद सरोज, बाबागंज निर्वाचन क्षेत्र, 23 जून को सुबह-सुबह गांव में आए थे और उससे पहले दिन सपा सांसद शैलेन्द्र, गांव में आए थे। इनके आने पर 'खून का बदला खून से लेंगे' के नारे लगे थे।

मुस्लिम अल्पसंख्यकों का पलायन :

बातचीत के दौरान युवकों ने बताया कि गांव में हमले की आशंका थी। इसलिए जब भीड़ गांव की तरफ आती दिखी तो सभी परिवारों ने अपने घरों में ताला लगाकर पहले गांव के दो बड़े पक्के मकानों में शरण लिये और उग्र हमलावर भीड़ से उन मकानों को खतरा लगा तो वे बस्ती

से सटे दरगाह (सूफी इबादत खाना, आस्ताना कादरिया चिश्तिया) में शरण लेने को मजबूर हुए। बाद में इन सभी परिवारों को सुरक्षा के लिए 15 किलोमीटर दूर स्थित कुंडा के बरई गांव के एक मदरसे में पनाह लेनी पड़ी। इसमें गांव की प्रधान रेशमा पत्नी निजाम अहमद भी शामिल हैं।

प्रवीण तोगड़िया का अस्थान गांव का दौरा :

23 जून के हमले के बाद अस्थान गांव से सारे मुसलमान गांव में आना शुरू हो गये थे व अपने घरों को सुधारने में जुट गए थे। ऐसे आतंक व असुरक्षा के माहौल में विश्व हिंदू परिषद के उग्र हिंदू नेता प्रवीण तोगड़िया को उत्तर प्रदेश सरकार व जिला प्रशासन ने सैंकड़ों की संख्या में अपने समर्थकों के साथ उत्तेजक नारेबाजी करते हुए अस्थान गांव में जाने व सभा करने की अनुमति दी।

जांच दल को बताया गया कि तोगड़िया ने पास के परियावां बाज़ार में पुलिस की उपस्थिति में सभा की और फिर रैली के रूप में मुस्लिम बस्ती से होता हुआ दलित बस्ती में गया जहां अल्पसंख्यकों के विरुद्ध उत्तेजनाजनक नारेबाजी की। इस रैली के दौरान मुस्लिम बस्ती में फिर एक बार हमला हुआ और 8 मकान पुनः जलाये गए। 4 अगस्त को जांच दल को गांव व बाज़ार में प्रवीण तोगड़िया के स्वागत में भगवा (ॐ के झंडे) तथा प्रवीण तोगड़िया के प्रथम आगमन पर अभिनंदन के बैनर व झंडे जगह-जगह लगे दिखे।

प्रवीण तोगड़िया की सभा पर रोक लगाने व अस्थान गांव में उनके दौरे को रोकने के लिए सामाजिक, राजनीतिक संगठनों ने आवाज़ उठायी, मांगपत्र दिया। गांव के प्रधान व अन्य लोगों ने तोगड़िया के आने की सूचना मिलने पर उन्हें रोकने के लिए मुख्यमंत्री, गृहसचिव समेत 6 बड़े अधिकारियों को फैक्स भेजा था।

वेलफेयर पार्टी के एक प्रतिनिधि मंडल ने 21 जुलाई को आयुक्त देवेश चतुर्वेदी से मिलकर उन्हें लिखित ज्ञापन दिया और तोगड़िया के दौरे को रोकने की मांग उठायी। प्रतिनिधिमंडल के एक सदस्य जावेद मोहम्मद ने जांच दल को बताया कि आयुक्त महोदय ने उनके सामने फोन करके कुछ निर्देश भी दिये लेकिन प्रतापगढ़ प्रशासन ने कोई परवाह नहीं की और प्रवीण तोगड़िया की सभा को होने देने में ही जुटी रही। दोपहर 2 बजे भीड़ ने गांव के बचे हुए कुछ मुस्लिमों पर हमले का रुख किया तो फोन पर सूचना मिलने पर जावेद ने पुनः कमिश्नर को सूचना दी। कमिश्नर ने पुलिस भेजने का आश्वासन दिया पर कोई कदम नहीं उठाया। प्रवीण तोगड़िया का आक्रामक दौरा अल्पसंख्यकों के प्रति उत्तर प्रदेश और भारत सरकार की मंशा को उजागर करता है।

पुलिस की भूमिका :

प्रत्यक्षदर्शियों से बातचीत कर यह पता चला कि स्थानीय पुलिस की भूमिका केवल एक मूकदर्शक की नहीं थी वरन् नवाबगंज थाने की पुलिस 23 जून की घटना के समय जत्था बनाकर नहर के दूसरी ओर खड़ी रही और पुलिस मुस्लिम आबादी के मकानों को जलते, लूटते देखती रही। हमलावर भीड़ करीब 4 से 5 घंटे तक छुट्टा घूम कर एक-एक घर को जलाती-लूटती रही और पुलिस यह सब होते देखती रही।

जांच दल के लोगों ने बताया कि वे दरगाह से घंटों अपने मकानों से आग की लपटों व धुंआ उठते देखते रहे। उन लोगों ने मोबाइल से थाने पर बार-बार खबर दी लेकिन पुलिस ने कोई हस्तक्षेप नहीं किया। न तो लाठी चार्ज किया न ही आंसू गैस का इस्तेमाल हुआ। पुलिस ने अग्निशमन की गाड़ियों को भी नहीं बुलाया।

जांच दल के लोगों ने बताया कि उन्होंने मोबाइल से अपने रिश्तेदारों को हर पल की जानकारी दी और उन्होंने पुलिस प्रशासन के उच्चाधिकारियों (आई.जी., डी.आई.जी., एस.पी., डी.एम.) से गुहार लगायी लेकिन ऐसा लगा कि पूरा प्रशासन घटना को होने देना चाहता था।

जांच दल को वहां मौजूद पुलिस व एल.आई.यू. के लोगों ने बताया कि वे गांव में शांति बहाली का प्रयास कर रहे हैं लेकिन इस बाबत कोई ठोस योजना उनके पास नहीं है। मौके पर मौजूद एस.आई. नामवर सिंह ने जांच दल को यह भी बताया कि वो 23 जून व 23 जुलाई दोनों दिन गांव में पुलिस बल के साथ मौजूद था पर भीड़ के आक्रोश के सामने पुलिस कुछ कर ही नहीं सकती थी इसीलिए उन्होंने भीड़ को रोकने का प्रयास नहीं किया।

जनप्रतिनिधियों की भूमिका :

जांच दल ने इस संबंध में गांव से पलायित लोगों से मोबाइल पर बात की तथा सामाजिक संगठनों की भी राय ली। भुक्तभोगियों से भी वार्ता की। सबने यह बताया कि मासूम लड़की की लाश मिलने पर मुसलमान समुदाय के विरुद्ध गांव में कोई आक्रोश नहीं फूटा। बदला लेने की कोई बात नहीं की गयी और चारों युवकों की गिरफ्तारी के बाद कोई सामूहिक हमले का माहौल नहीं था। हत्या के तीन दिन बाद जिस तरीके से बाहर से संगठित होकर पेट्रोल, मिट्टी का तेल, सरिया आदि लेकर नारे लगाते हुए गांव के बाहर से लोग जत्थों में आये और 5 घंटे से ज़्यादा मुस्लिम बस्ती को लूटते-जलाते रहे और पुलिस हाथ पर हाथ बांधे खड़ी रही, उससे साफ जाहिर होता है कि स्थानीय सांसद शैलेंद्र, कुंडा विधायक रघुराज प्रताप सिंह व विधायक विनोद सरोज की भूमिका मुस्लिम विरोधी थी और हमलावरों को

उनका समर्थन था।

भुक्तभोगियों ने जांच दल को बताया कि उनके रिश्तेदारें व अन्य लोग भी इन्हें हमले की जानकारी देते रहे लेकिन उन्होंने कुछ किया नहीं।

गौरतलब है कि अपने राजनीति के शुरुआती दिनों में कुंडा विधायक रघुराज प्रताप सिंह 'राजा भईया' का नाम दिलेरगंज कांड से सीधे जुड़ा था जहां मुसलमानों की नृशंस हत्या की गयी थी। ये तीनों लोग सपा से जुड़े हैं जिनकी सरकार प्रदेश में है।

प्राथमिकी : 21 जून व 24 जुलाई के बीच तीन प्राथमिकी दर्ज की गयी।

- प्रथम प्राथमिकी नाबालिग लड़की की हत्या, बलात्कार को लेकर थी जिसमें 4 लोग नामजद थे और वे अभी जेल में हैं।
- दूसरी प्राथमिकी मु.अ.सं. 88/12, धारा 147/148/149/307/452/436/382/295/506/435 भा.द.सं. व 7 सी.एल.ए. के तहत थाना नवाबगंज में 23 जून को फैयाज़ अहमद द्वारा दर्ज करायी गयी जिसमें 25 नामजद लोगों के साथ 500-600 अज्ञात लोग शामिल हैं जो मुस्लिम आबादी के लूट, आगजनी, हमले में शामिल थे।
- तीसरी प्राथमिकी 24 जुलाई को नवाबगंज थाने में धारा 147, 236, 427 आई.पी.सी. व 7 सी.एल.ए. में राज्य द्वारा थानाध्यक्ष, नवाबगंज द्वारा दर्ज की गयी जिसमें 4 लोग नामजद हैं और यह प्रवीण तोगड़िया के दौरे के समय हुए हमले व लूट को लेकर है।

मौजूदा स्थिति : मुस्लिमों का जबरन बहिष्कार

4 अगस्त को दिन भर जांच दल अस्थान गांव में रहा। घटना के 40 दिन बाद भी एक भी परिवार अपने घर नहीं लौटा। उन्हें भरोसा नहीं कि प्रशासन व पुलिस के लोग उनकी सुरक्षा कर सकेंगे। और यह तब है जब गांव की प्रधान इसी बस्ती की मुस्लिम महिला है।

उनके जले हुए घरों की कोई मरम्मत नहीं हो पा रही है क्योंकि उन्हें आस-पास के गांवों से मिस्त्री, मज़दूर, कारीगर, इलेक्ट्रिशियन, प्लंबर नहीं मिल रहे थे। मुस्लिम आबादी का बहिष्कार करवाया जा रहा है। उनके जिन 10 घरों के पास खेत हैं, उन खेतों की रोपाई भी नहीं हुई है और अब उनके खेत के चारों ओर रोपाई हो गयी है तो वो अपने हिस्से में रोपाई भी नहीं कर पा रहे हैं। कोई अपना ट्रैक्टर नहीं दे रहा है। गांव के लोगों का कहना है कि इससे पहले दलितों और मुस्लिमों के बीच कोई आपसी बैर नहीं रहा है और दोनों समुदाय आपसी सौहार्द के साथ रहते आए हैं।

दोनों समुदाय में किसी के भी बच्चे फिलहाल घटना के बाद से स्कूल नहीं जा रहे हैं।

लोग पुलिस व स्थानीय दबंगों से इतनी दहशत में हैं कि असली हमलावरों का नाम पूछे जाने पर वो केवल 'इलाके के बड़े लोग' कहकर चुप हो जाते हैं, किसी का नाम नहीं लेते।

प्रवीण तोगड़िया के दौरे के साथ पूरे मामले का सांप्रदायिक ध्रुवीकरण किया जा रहा है और दलितों व मुस्लिमों के बीच आपसी द्वेष फैलाने का पूरा प्रयास गांव के ताकतवर लोग कर रहे हैं।

जिला प्रशासन ने सारे समुदायों व समाज के संभ्रांत लोगों के साथ कोई संयुक्त बैठक नहीं की और न ही मुस्लिम समुदाय को भरोसा दिलाने का कोई प्रयास किया।

आर्थिक अनुदान/सहायता

जांच दल को बताया गया कि सपा सांसद अबु हाशिम ने अस्थान गांव के मुस्लिम समुदाय के एक प्रतिनिधि मंडल को साथ लेकर प्रदेश के मुख्यमंत्री से मुलाकात की और प्रत्येक पीड़ित परिवार को 4 लाख की सहायता राशि दिलवायी।

हत्या व बलात्कार की शिकार परिवार को भी प्रशासन ने सहायता उपलब्ध करायी।

गिरफ्तारियां :

जांच दल द्वारा इकट्ठा किये गये तथ्य के अनुसार हत्या/बलात्कार में 4 लोग व आगजनी, लूट हमले में 23 स्थानीय दलित लोग गिरफ्तार किये गये जो अभी जेल में हैं। जांच दल को दलित समुदाय के लोगों ने बताया कि 23 जून की घटना के बाद गांव से 23 लोगों को पकड़ा गया जबकि हमलावर बाहर से आए थे। गिरफ्तार लोगों में एक 80 साल के वृद्ध हैं और एक छात्र है जो गांव में था ही नहीं।

उत्तर प्रदेश सरकार व शासन की भूमिका :

6 फरवरी को सत्ता संभालने के बाद उत्तर प्रदेश में मुस्लिम अल्पसंख्यक समुदाय के लोगों पर लगातार हमले की कई घटनायें सामने आई हैं। पुलिस-पी.ए.सी. व सुरक्षा बलों की भूमिका भी निष्पक्ष नहीं है और प्रकट तौर पर मुस्लिम विरोधी रही है।

कोसी कला में दंगा हुआ, जानें गयीं और संपत्तियां नष्ट हुईं। बरेली में कर्फ्यू का सिलसिला टूट नहीं रहा है। 17 अगस्त 2012 को इलाहाबाद व लखनऊ की घटनाओं से पता चलता है कि मुस्लिम युवकों का इस सरकार से जबर्दस्त मोहभंग हो रहा है। मौजूदा सरकार ने अभी भी कुछ ऐसा नहीं किया है जो मुस्लिम समुदाय में विश्वास व भरोसा दिला सके।

अस्थान गांव में जले हुए, लुटे हुए मकान शासन

प्रशासन की नीति, नियत व मंशा की कहानी कह रहे हैं।

निष्कर्ष : संपूर्ण घटना की जांच के बाद जांच दल निम्न निष्कर्षों पर पहुंचा।

1. 20 व 21 जून की रात को दलित लड़की के साथ बलात्कार व उसकी जघन्य हत्या और बुरे हाल में मिला उसका शव इस बात का सबूत है कि ये अपराध ताकतवर व क्रूर आपराधिक मानसिकता वाले अपराधियों का काम है।
2. 23 जून को मुस्लिम घरों में आगजनी की कार्रवाई संयोजित और संगठित थी जिसमें आपराधिक तत्वों ने बड़े पैमाने पर मिट्टी का तेल व पेट्रोल छिड़ककर कई घंटों तक आगजनी और लूटपाट की। पुलिस मौके पर मौजूद थी व मूकदर्शक बनी रही।
3. प्रवीण तोगड़िया के आगमन, सभा करना, मुसलमानों के घरों में पुनः आग लगाना व उनको धमकाना आदि की कार्रवाई में पुलिस और प्रशासन की खुली शह व मदद उसे मिली। उसे ऐसे संवेदनशील घटनास्थल पर आने की अनुमति ही नहीं दी जानी चाहिए थी। उसके प्रचार सामग्री व बैनर आज तक खुले आम इलाके में लहरा रहे हैं और अल्पसंख्यकों पर हमले का संकेत दे रहे हैं। इस सबके कारण गांव के मुसलमान आज भी अपने घरों में नहीं लौट पा रहे हैं और उपस्थित पुलिस से उन्हें असुरक्षा महसूस हो रही है।
4. इस पूरी घटना में कोटेदार और पुलिस की भूमिका बेहद संदिग्ध है। लड़की की हत्या व बलात्कार की घटना में पुलिस तुरंत मौके पर गयी ही नहीं और मुसलमानों के घरों की घटना में तथा तोगड़िया के दौरे के समय हुई घटना में पुलिस मौके पर मौजूद थी। पुलिस की इसमें सहमति व सहयोग सुस्पष्ट है।
5. सपा नेताओं व सरकार ने ज़ाहिर तौर पर इस घटना को मुस्लिम बनाम दलित घृणा फैलाने का प्रयास किया है और गांव के शांतिपूर्ण माहौल को सांप्रदायिक तनाव व दंगे की ओर ढकेला है। मुस्लिम बस्ती पर हमले के लिए दलितों को उकसाने की कोशिश की है, हालांकि इसमें वो गांव के दलितों को भागीदार नहीं बना पाए हैं। इस हमले में सरकार ने जानबूझकर कई निर्दोष दलितों को जेल में डाल रखा है और दोनों समुदायों के लोगों को भयभीत किया हुआ है। मुस्लिम समुदाय के लोगों को प्रभाव में लेने के लिए उसने कुछ बाहरी मुस्लिम नेताओं को सक्रिय करके उनके मार्फत कुछ मुआवज़ा दिया है। परंतु दोनों समुदायों को सौहार्दपूर्ण माहौल में जीवनयापन करने का कोई प्रयास नहीं किया गया है। स्थानीय दबंगों द्वारा दंगा कराने का डर अब भी बना हुआ है।

मांगें : जांच दल यह मांग करती है कि :

1. उत्तर प्रदेश सरकार अल्पसंख्यकों पर हो रहे हमलों के बिंदु पर अस्थान व उत्तर प्रदेश की अन्य दंगों की घटनाओं पर श्वेत पत्र जारी करे व अपनी भूमिका स्पष्ट करे।
2. अस्थान गांव की इन घटनाओं में :
   - दलित लड़की के बलात्कार व हत्याकांड की तथा मुस्लिम समुदाय पर हुए हमलों की निष्पक्ष न्यायिक जांच उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश द्वारा करायी जाए।
   - मुस्लिम घरों पर हमले की घटना को अंजाम देने में सांसद शैलेन्द्र, विधायक रघुराज प्रताप सिंह, विनोद सरोज, स्थानीय कोटेदार अवधेश सिंह व अन्य दबंग लोगों की भूमिका की जांच की जाए।
   - प्रवीण तोगड़िया को सभा करने व अस्थान जाने की अनुमति देने की राजनीतिक व प्रशासनिक ज़िम्मेदारी तय की जाए। विश्व हिन्दू परिषद व उसके स्थानीय कार्यकर्ताओं की भूमिका की जांच हो।
   - घटना की जांच में पुलिस प्रशासन की भूमिका की जांच की जाए तथा नवाबगंज थाने के थानाध्यक्ष व अन्य पुलिसकर्मियों के विरुद्ध एफ.आई.आर. दर्ज की जाए।
3. पूरे कांड की जांच समयबद्ध ढंग से चलाकर उसके दोष को तय कराया जाए ताकि कोई निर्दोष बिना ट्रायल के जेल में न पड़ा रहे।
4. संपूर्ण घटना की इस जांच के आधार पर सभी दोषियों को दंडित किया जाए।
5. प्रतापगढ़ प्रशासन विशेष कैम्प लगाकर अस्थान गांव के मुस्लिम अल्पसंख्यकों को ससम्मान उनके घरों में स्थापित करे। उन्हें पर्याप्त सुरक्षा मुहैया करायी जाए व उनके जीविकोपार्जन की गारंटी करायी जाए। गांव में शांति बनाए रखने के लिए जिला अधिकारी समेत अन्य अफसरों का हर दूसरे दिन दौरा कराया जाए। दोनों समुदाय के बच्चों को स्कूल भेजने की गारंटी की जाए।

नोट : जांच दल ने जिन लोगों से आमने-सामने व मोबाइल से बात की, उनमें मुस्लिम समुदाय के लोगों ने कहा कि रपट में उनके नाम का उल्लेख न किया जाए वरना वे राजनीतिक व पुलिसिया जुल्म के शिकार हो सकते हैं। केवल मुश्ताक नामक युवा अपना नाम देने को तैयार हुआ।

हर दिन लगता गरीबी का महाकुम्भ

■ आदियोग

जिसे अल्लाह ने बसाया, फारसी में उस जगह को इलाहाबाद कहते हैं। शहंशाह अकबर ने गंगा और यमुना नदी के संगम की ख़ूबसूरती पर फिदा होकर वहीं अपना आलीशान क़िला बनाया और प्रयाग नगरी को नया नाम दिया - इलाहाबाद। संस्कृत में प्रयाग का मतलब बलि स्थल होता है।

मिथकों के मुताबिक़ सृष्टि की रचना करने के लिए ब्रह्मा ने यहीं बलि दी थी। इलाहाबाद की पहचान त्रिवेणी नाम से भी है। त्रिवेणी मतलब तीन नदियों का मिलन। लेकिन सरस्वती नाम की तीसरी नदी का वजूद बहुत पहले मिट चुका है। बहरहाल, इस धर्म नगरी को सूबे की सांस्कृतिक राजधानी होने का भी गौरव हासिल है। आज़ादी की जंग में भी इसका ऊंचा मुकाम रहा है। इलाहाबाद की धरती ने अगर चंद्रशेखर आज़ाद की शहादत देखी तो देश और प्रदेश को कई क़द्दावर राजनेता भी दिये। इस आला पहचान के अलावा शहर में सूबे की सबसे ऊंची अदालत भी है। तो क्या हुआ? वही हुआ जो हिंदुस्तान के ज्यादातर शहरों में हुआ। यहां भी गरीबी का पेचीदा सवाल तनिक सुलझने के बजाय सरकारी फाइलों में और ज्यादा उलझ कर कहीं खो गया।

तो अल्लाह की बसायी जगह में भी ग़रीब बसते हैं और जहन्नुम जैसे हालात में जीते हैं, ग़रीबी की बलिवेदी पर हर रोज़ अपनी ज़िंदगी की क़ुर्बानी देते हैं। अपने मित्र और स्वतंत्र नीति विश्लेषक संजय विजयवर्गीय के संग इलाहाबाद की गरीब बस्तियों में दो दिन घूमने के बाद यही तस्वीर उभरी। इस यात्रा में हमारे गाइड थे - विज्ञान फाउंडेशन के इलाहाबाद स्थित कार्यकर्ता जीतेंद्र मौर्या और प्रभा।

शाह जी का पूरा कभी शहर से बहुत दूर छोटा सा गांव था, आज शहर के भीतर की बस्ती है। आधा गंवई और आधा शहरी। आख़िर पीढ़ियों पुराने निशान जल्दी नहीं छूटते। बस्ती के बीच छोटी सी गली गुजरती है। आधी गली तक एक तरफ नये बने मकानों का पिछवाड़ा है, दूसरी तरफ चौड़ा-गहरा नाला और नाले के किनारे कच्चे-अधकच्चे मकान। कहने की ज़रूरत नहीं कि नाले के उस पार गांव के पुराने बाशिंदे रहते हैं। नाले के इस पार की गली वहीं तक कुछ ठीकठाक है जहां तक नये मकान हैं। उसके बाद पूरी गली को छेकता गड्ढा है और वहीं से नगर निगम के सफ़ाईकर्मियों के लिए बने कोई एक दर्ज़न घरों की शुरुआत होती है। गड्ढा निशान है कि इसके बाद ग़रीबों का इलाक़ा है। सीवर लाइन भी इस गड्ढे तक पहुंच कर रुक जाती है। यह अलग बात है कि गली में सीवर लाइन जितनी भी दूर तक है, कभी मेन लाइन से जुड़ी ही नहीं। उसके मेनहोल कूड़े का डिब्बा हो चुके हैं।

शांति यहीं रहती हैं। कोई अट्ठारह साल पहले वह अपने पति और दो छोटे बच्चों के साथ बांदा में अपना घर-दुआर छोड़ कर इलाहाबाद आयी थीं। इसलिए कि गांव में पेट भरना दिनोंदिन मुश्किल होता जा रहा था। तब से अब तक छह बार उनका ठिकाना बदल चुका है। पति अभी दो साल पहले नगर निगम में ठेके के सफाई मजदूर बने हैं। दो साल पहले यह नया ठिकाना ठेकेदार की मेहरबानी से मिला। इसमें एक कमरा है और उसी में रसोई और शौचालय, पीछे छोटा सा आंगन। यों, सबका चूल्हा घर के बाहर है। सीवर लाइन है नहीं इसलिए शौचालय का पाइप गली पार करता हुआ सीधे खुले नाले में गिरता है। गंगा जाता यह गंदा नाला भी कुछ थमा-थमा सा रहता है। सुकून बस इतना कि पानी के लिए कहीं दूर नहीं जाना पड़ता। बगल में धोबी घाट का पाइप जो है।

शांति के पति का नाम ही उसकी हैसियत बयान करता है - गरीब दास। पगार है छत्तीस सौ रुपये महीना लेकिन घर आते हैं कुल छब्बीस सौ। क्यों? जवान हो चला बेटा तपाक से जवाब देता है - एक हजार रुपया ठेकेदार हड़प लेता है। जो बचता है, उसमें भी क़रीब एक तिहाई आने-जाने में निकल जाता है। जी हां, गरीब दास की ड्यूटी यहां से कोई बीस किलोमीटर दूर चौफटका में लगती है। किराये-भाड़े की भरपाई के लिए वह पास के निजी अस्पताल

में भी सुबह ड्यूटी करता है। या कहें कि परिवार पालने के लिए पूरा दिन चकरघिन्नी रहता है।

बेटा कमाऊ पूत भी है। किसी कालोनी में झाड़ू लगाने और घरों से कूड़ा उठाने का काम करता है और मां शांति तीन घरों में सुबह-शाम झाड़ू पोछा लगाती है। बड़े घरों के लोग उससे बरतन नहीं मंजवाते। क्यों? शांति का जवाब है- हम हेला हैं न! लेकिन हेला तो मुसलमानों में होते हैं और आप लोग तो नाम से हिंदू हो? शांति अचरज के साथ कहती है- अच्छा... तो मेहतर समझ लो। यह बानगी है कि ऊपरी सतह पर भले ही कहीं हिंदू और मुसलमान के बीच कोई फासला हो लेकिन निचली सतह पर दोनों के बीच फर्क कर पाना बहुत मुश्किल है।

शांति भी अपने नाम के मुताबिक़ है, हंसते हुए अपनी तक़लीफें पीती है। परदेसी इलाहाबाद में उसका जीवन कभी शांति से नहीं गुजरा। ससुराल जा चुकी बेटी के फेफड़ों में दाना पड़ गया था। पहले सरकारी अस्पताल में उसका इलाज चला। कोई फायदा न देख उसे निजी अस्पताल ले जाना पड़ा। दस हजार से अधिक रुपये इलाज में उड़ गये। निजी अस्पताल में ही बेटे का एपेंडिक्स का आपरेशन हुआ। शांति भी मरीज़ बनने से नहीं छूटी। ट्यूमर हो जाने के कारण उसे अपनी बच्चेदानी निकलवानी पड़ी, निजी अस्पताल में ही। जो कमाया, इलाज में लुट गया। ऊपर से क़र्जा भी चढ़ गया जो अभी तक उतर नहीं सका। लेकिन शांति ने जैसे अशांत रहना सीखा ही नहीं- प्यास का मसला बादलों पे छोड़ रखा है।

महाकवि निराला की मशहूर कविता है- वह तोड़ती पत्थर/देखा मैंने उसे इलाहाबाद के पथ पर... शांति भी इस कविता की औरत जैसी है। भले ही वह पत्थर नहीं तोड़ती लेकिन ज़िंदा रहने के लिए हर दिन मुश्किलों का पहाड़ तोड़ती है- वह पहाड़ जिसे जितना तोड़ो, वह और ऊंचा और सख़्त होता जाता है। और हां, शहर में शांति अकेली ऐसी औरत नहीं है।

कनैला गांव भी नयी बनी कालोनी के बीच है. यहां भी एक सीध में बेघरों के लिए कोई डेढ़ दर्ज़न घर हैं, हर घर दुमंज़िला- छोटा सा कमरा, पीछे उसका आधा आंगन और वहीं से ऊपर जाने के लिए सीढ़ी। रसोई ना शौचालय। सुशीला देवी बारह साल से इलाहाबाद में हैं और इस घर में दो साल से। घर ख़ाली पड़ा था, सो यहां आ गयीं लेकिन खटका बना रहता है कि कब उन्हें बाहर का रास्ता दिखा दिया जाये। उनका पति ट्रैक्टर की ड्राइवरी करता था, पांच साल पहले दारूबाज़ी ने उसकी जान ले ली।

इसके बाद मुसीबतों की बाढ़ आ गयी। पहले वह भी मज़दूरी करती थी। लेकिन पति की मौत के तीन साल बाद ही उसके पैर सूज गये और वह काम करने से लाचार हो गयी। तब से चौदह साल का बड़ा बेटा दोपहिया वाहनों के मिकेनिक की दुकान पर काम सीख रहा है। उसे पचास रुपये रोज़ मिलते हैं। दो साल छोटा दूसरा बेटा तीस रुपये रोज़ पर बढ़ईगिरी का काम सीख रहा है। अब यही दोनों घर की गाड़ी के खेवय्या हैं। तनिक सोचिये कि यहां अगर बाल मज़दूर विरोधी कानून का डंडा चल जाये तो क्या कहर बर्पा होगा? सुशीला के पांच बच्चे हैं। दो बहुत छोटे हैं जबकि उनसे बड़ी नौ-दस साल की सूखी सी लड़की स्कूल जाती है। यही क्या कम है?

पूरा फतेह मोहम्मद भी कभी टोला था और बरसात में गंगा का पानी उसके किनारे तक पहुंच जाया करता था। अब यहां गरीबों के लिए बनायी गयी कालोनी भी है। पांच सौ घर तैयार हैं लेकिन ज़्यादातर ख़ाली हैं। जो रह रहे हैं, बगैर किसी लिखा-पढ़ी के। इन बहुमंज़िली इमारतों से पहले ढाई सौ से अधिक इकमंज़िला मकान बनने थे। काम देरी से शुरू हुआ तो लागत बढ़ गयी, कुल छप्पन घर बन सके और वह भी अधूरे ही रहे। तीन साल से यहां काम बंद है और यह इलाका कुछ भुतहा सा दिखता है।

सरपोतहिया गांव की तस्वीर बहुत तेज़ी से बदली। ग़रीबों के लिए चार मंज़िला कालोनी बनी। इसमें साढ़े छह सौ से अधिक घर हैं और जो ग़रीबों के लिहाज़ से बेहतर भी हैं। बस मुश्किल यह है कि कालोनी आबादी से बहुत दूर है। यह मुफ्त के घर हैं। हर दिन जांच होती है कि कितने घर आबाद हैं। जिसके दरवाज़े ताला मिले, उसका पंजीकरण रद्द भी हो सकता है। यह भुला दिया गया कि ग़रीबों के पास भी पेट होता है, कि जिसे रोज़ भरना होता है, कि इसके लिए मेहनत-मज़दूरी करनी होती है, कि इसके लिए घर से बाहर निकलना होता है और अमूमन पूरे परिवार के साथ। तो जहां भरा-पूरा परिवार है, उसका कोई न कोई सदस्य जांच के लिए हाज़िर रहता है और ऐसे ख़ुशकिस्मत परिवार बस दो सौ के आसपास हैं। बाक़ी घरों के आबंटन का बने रहना पड़ोसियों की मेहरबानी के भरोसे रहता है जो कह सकते हैं कि घर के लोग अभी किसी काम पर निकले हैं, आते ही होंगे। इसे झूठ कहें कि पड़ोसियों की भलमनसाहत का नमूना?

सरपोतहिया के आसपास खेत नहीं रहे। उनकी जगह बन चुके या बन रहे मकानों ने ले ली है. आबादी अभी छिटपुट है। ठेला-रिक्शा खींचने वाले, खोम्चा लगाने वाले, फेरी करने वाले और दूसरे दिहाड़ी मज़दूरों समेत घरेलू कामगारों को कमाई के लिए रोज़ लंबा सफर तय करना

होता है। अनीता देवी यहां आने से पहले करेली में थीं। चौका-बासन के लिए उनके तीन बंधे घर करेली में ही हैं जहां उन्हें सुबह-शाम जाना होता है और भाड़े पर रोज बत्तीस रुपये ख़र्च करने होते हैं। वैसे, जो इतना रुपया केवल भाड़े पर ख़र्च करे, अपने योजना आयोग के हिसाब से तो वह ग़रीबी की रेखा के ऊपर कहलायेगा न।

ग़रीबों को सरकारी मकान दिये जाने में अजब तमाशा हुआ। गंगा पार के लोगों को यमुना पार तो यमुना पार के लोगों को गंगा पार ठेल दिया गया। सरपोतहिया में अल्लापुर, बघाड़ा, मीरापुर, कटरा, करेली, चकिया, सलीमसराय आदि इलाक़ों में बरसों से रह रहे बेघरों को सर पर छत नसीब हुई। ये तमाम इलाक़े यहां से पंद्रह से तीस किलोमीटर दूर हैं। घर देते समय यह मामूली अक़्ल पता नहीं कहां घास चरने चली गयी कि गरीब अपनी कमाई के लिहाज़ से ही अपना ठिकाना चुनते हैं और सामाजिकता में बंधते हैं। किसी दूसरी जगह फेंक दिये जाने पर उनका दोहरा नुक़सान होता है। इसे फूलकुमारी के हवाले से समझें। वह अस्सी साल से ऊपर की हैं और अकेली हैं। चुंगी परेड की झोपड़पट्टी में उनकी भी झुग्गी है। उम्र के आख़िरी पड़ाव पर पक्का घर मिलना उनके लिए किसी सपने से कम नहीं लेकिन सरपोतहिया आकर उनका भरम टूट गया। ख़र्चे-पानी के लिए वह गोबर के कंडे बना कर बेचती रही हैं। सरपोतहिया में यह मुमकिन नहीं। सो, वह गंगा पार चुंगी परेड से यमुना पार नैनी तक परेड करती हैं। यह ग़रीब होने की दैनिक सज़ा है।

झूंसी का शास्त्री ब्रिज पार करते ही गंगा किनारे चुंगी परेड का इलाक़ा शुरू हो जाता है। यहां से मिंटो पार्क तक के बीच में इधर-उधर दस हज़ार से अधिक झुग्गियां हैं। हम शास्त्री ब्रिज के चुंगी नाके के क़रीब बसी झुग्गियों के बीच हैं। बस्ती में चौतरफा गंदगी का राज है। हम बस्तियों के बीच से गुज़र रहे हैं और मैं इधर-उधर फैले बदहाली-कंगाली के सबूतों पर कैमरा फोकस करने में मशगूल हूं कि अचानक पीछे से कीचड़ में तरबतर सुअरों का झुंड दौड़ लगाता हुआ बगल से गुजरता है। उनकी दुमों की झिटकन के छींटे मेरे कपड़ों पर पड़ते हैं और एकाध चेहरे पर भी। घिना जाता हूं- उफ, ये क्या हुआ? मेरे इस भाव पर बच्चे ताली पीटते हुए मज़ा लेते हैं, औरतें भी फिस्स से हंस पड़ती हैं। गोया कहा जा रहा हो कि यही है बस्ती का हालचाल बाबूजी, आप तो एक नमूने से ही घबरा गये?

सेना से दुश्मन देश की सेना को डरना चाहिये। लेकिन बस्ती के लोग अपनी ही सेना से डरते हैं। यह ज़मीन सेना की है और सेना बस्ती को उजाड़ने पर तुली हुई है। जिला प्रशासन भी यही चाहता है। सन 2000 में बस्ती पर यह कहर टूटते-टूटते बचा। इसलिए कि समय रहते अनुग्रह नारायण सिंह तक ख़बर पहुंच गयी और मामला कोर्ट में पहुंच गया। बताते चलें कि छात्र राजनीति से निकले अनुग्रह जी ख़ास कर उत्तरी इलाहाबाद के ग़रीब-गुरबों के लिए किसी मसीहा से कम नहीं और फिलहाल यहीं से विधायक भी हैं। जिला प्रशासन 2001 के अर्ध कुंभ के बहाने गंगा किनारे की यह ज़मीन ख़ाली कराना चाहता था कि बस्ती के बने रहने से आयोजन की व्यवस्था करने में दिक़्क़त होगी। लेकिन कोर्ट ने उसकी दलील को ख़ारिज करते हुए बस्ती के पक्ष में स्टे ऑर्डर दे दिया। तब से अब तक जिला प्रशासन चुप रहा लेकिन सेना नहीं। अभी एक माह पहले ही सेना ने एक बार फिर बस्ती को हटाने की कोशिश की। इसे कानूनी चुनौती दी गयी और आख़िरकार अदालत ने दो टूक कह दिया कि बिना पुनर्वास के बस्ती को नहीं हटाया जा सकता।

तो भी बस्ती के लोग सहमे हुए हैं। उन्हें यह डर सालता रहता है कि पता नहीं कब सेना उनकी बस्ती पर चढ़ाई कर दे। बस्ती के लोग बताते हैं कि फ़ौज़ी एकदम सुबह आते हैं। जब भी आते हैं, तीन-चार झुग्गियां तबाह कर जाते हैं। जानवरों की तरह लोगों को ठेलते हैं और गालियों से बात करते हैं। जो बोले, उनका झापड़ खाये। यह पूरी बस्ती को धमकी होती है कि भागो यहां से, नहीं तो खदेड़ दिये जाओगे। उन्हें देखते ही बस्तीवालों की घिग्घी बंध जाती है। अगले साल अर्धकुंभ पड़ेगा या कहें कि धर्म का बाज़ार सजेगा। बस्ती वालों को भरोसा नहीं कि व्यवस्था की दुहाई देकर मेला प्रशासन उन्हें दोबारा उजाड़ने की ताक में नहीं रहेगा।

संजय नगर प्रयाग स्टेशन के नजदीक अल्लापुर इलाक़े में पड़ता है, अगल-बगल की दो रेलवे लाइनों और आमने-सामने की दो सड़कों के बीच। यहां दड़बेनुमा कोई सवा सवा सौ घर हैं। छह हैंडपंप हैं और सभी बदबूदार पानी उगलते हैं। नगर निगम की मेहरबानी से इकलौता नल भी है और जहां पानी आने से घंटों पहले ख़ाली बरतनों की लाइन लग जाती है। जो पानी लेने से चूक जाते हैं, उन्हें दूर से पानी ढो कर लाना होता है। वैसे, बस्ती के इस इकलौते नल के तुरंत बाद कीचड़ का फैलाव शुरू हो जाता है जो चंद क़दम की दूरी पर दलदल में बदल जाता है और जो सुअरों की आरामगाह है। रेलवे लाइन का क़िनारा पूरी बस्ती का खुला शौचालय है। क्या विडंबना है कि यहां ज्यादातर सफ़ाई मज़दूर रहते हैं।

दिलीप भी सफ़ाई मज़दूर हैं। कोई सोलह साल से संजय नगर में हैं। उनके दो और भाई भी यहीं रहते हैं। चौथा गांव में रहता है। चित्रकूट के दूरदराज़ गांव में बस कच्चा घर है और कुल दो बिस्वां ज़मीन। दिलीप अनपढ़ हैं लेकिन उनके तीनों बच्चे स्कूल जाते हैं। यों, कोई दस घरों के बच्चे ही स्कूल जाते हैं। साल भर पहले जब उनके छोटे भाई की पत्नी अपने पहले बच्चे को जन्म देकर चल बसी तो दिलीप और उनकी पत्नी ने उस दुधमुंहे बच्चे को अपना बना लिया- इस दरियादिली का ढोल पीटे बग़ैर समझाया कि इनसानियत का फ़लसफ़ा तो दिल से पढ़ा जाता है। ख़ाली समय में दिलीप पूरी बस्ती को जगाने-जुटाने का काम करते हैं। उन्हीं की कोशिशों का नतीजा था कि दस महीना पहले बस्ती के लोगों को स्मैकिया बनाने आये बाहरी लोग पकड़े जा सके। दिलीप नहीं चाहते कि बस्ती में नशेड़ी पैदा हों। कहते हैं कि हमें अपनी बुरी आदतों से भी लड़ना है और ग़रीब विरोधी सरकार से भी। काश कि बस्ती-बस्ती में दिलीप जैसे समझदारों की बाढ़ आ जाये।

अब अलोपी बाग़ की मलिन बस्ती चलें। यहां बत्तीस साल पहले सीवर लाइन पड़ी लेकिन उसे आज तक चालू नहीं किया जा सका। ज़ाहिर है कि किसी घर में शौचालय नहीं। कोई सवा सौ घरों की इस बस्ती के लिए दो छोर पर सार्वजनिक शौचालय बने हैं। उनमें एक तो बहुत गंदा रहता है। दूसरा थोड़ा साफ-सुथरा रहता है और उसका सेवा शुल्क है चालीस रुपये प्रति घर। लेकिन उसमें बहुत लंबी लाइन लगती है। दोनों शौचालयों में कुल दस-दस सीटे हैं- छह पुरुषों के लिए तो चार महिलाओं के लिए। सुकून बस इतना है कि ज्यादातर घरों में पानी का कनेक्शन है। भले ही नगर निगम हाउस टैक्स वसूलता है लेकिन उसे दूसरी नागरिक सुविधाएं मुहैय्या कराने की सुध नहीं रहती।

बस्ती के लगभग सभी घरों की महिलाएं घरेलू कामगार हैं। इनमें कई क़िरायेदार की हैसियत में हैं। कमला देवी भी उन्हीं में से एक हैं। उन सौभाग्यशाली लोगों में से हैं जिन्हें कांशीराम आवास योजना के तहत मुफ़्त में सरकारी मकान मिला। लेकिन नैनी में। नैनी की कालोनी से दूर-दूर तक घरेलू कामगार के लिए काम की कोई गुंजाइश नहीं। काम तो इस बस्ती के अगल-बगल के मोहल्लों में मिलता है। रहें अगर नैनी में और काम करने यहां आयें तो रोज बीस रुपये स्वाहा होगा और यह कहीं से तर्कसंगत नहीं। लेकिन कशमकश देखिये कि वह क़तई नहीं चाहतीं कि नैनी में मिला घर उनके हाथ से निकल जाये और यह भी नहीं चाहतीं कि मुंह से निवाला छिन जाये। ग़रीब की ज़िंदगी में सर पर अपनी छत का होना सबसे हसीन सपना हो सकता है लेकिन जो पेट के सामने उड़नछू हो जाया करता है। अभी एक माह पहले उनके भाई की मौत हो गयी। काम से उन्होंने पंद्रह दिन की छुट्टी ली। वापस लौटीं तो एक घर में उनकी काम से ही छुट्टी हो गयी। घरेलू कामगार महिलाओं के लिए एक घर का छूटना औसतन एक तिहाई कमाई से हाथ धो बैठना हुआ करता है और यह ख़तरा हमेशा बना रहता है।

तो ज़िंदगी के पनघट की डगर यहां भी बहुत कठिन है लेकिन तारीफ करनी होगी कि इस बस्ती की जिन महिलाओं से हम मिले-बतियाये, उनमें लाचारगी या पस्त हिम्मती के निशान कहीं से नज़र नहीं आये। उनकी आंखें बेहतर कल के सपने से लबालब दिखीं। इनमें से ज्यादातर अनपढ़ हैं या कम पढ़ी-लिखी हैं लेकिन अपने बच्चों की पढ़ाई को लेकर कम संजीदा नहीं हैं। कइयों की लड़कियां दूसरों के घरों में काम करते हुए पढ़ाई भी कर रही हैं। जिनके सुख छोटे होते हैं, उनके दुख भी उतने ही छोटे होते हैं। यह कसक सबको है कि सरकारी नज़र उनकी गिनती ग़रीबों में नहीं करती। कुछ के पास अगर पीला राशन कार्ड है तो कई बिना राशन कार्ड के हैं। अभी कुछ समय पहले बस्ती में बाहर से आये किसी शख़्स ने ग़रीबी रेखा के नीचे वाला उर्फ लाल रंग का राशन कार्ड बनवाने के नाम पर सबसे दस-दस रुपये झटके और चंपत हो गया।

मैं इस रिपोर्ताज़ का समापन नवंबर 2008 में लिखी गयी अंशु भाई की कविता के आख़िरी छंद से करना चाहूंगा-

क़र्ज की हमको दवा बताई
क़र्ज ही थी बीमारी
साधो!
कर्मन की गति न्यारी।
शहर-शहर में बरतन मांजे
भारतमाता ग्रामवासिनी
फिर भी राशनकार्ड न पाये
हर-हर गंगे पापनाशिनी
ग्लोबल गांव हुई दुनिया में
प्लास्टिक की तरकारी
साधो!
कर्मन की गति न्यारी।

नोट : इस रिपोर्ट के आधार पर उत्तर प्रदेश हाईकोर्ट के लखनऊ बेंच में विभिन्न जनसंगठनों द्वारा एक जनहित याचिका दायर की जा रही है।

उत्तराखंड के वन संरक्षण जनांदोलन और उनका व्यापक महत्व

■ चंचल गढ़िया

उत्तराखंड का नाम सुनते ही बड़े-बड़े हरे-भरे जंगल, पहाड़, नदियां, सीढ़ीदार खेत, पहाड़ में बिछे कई टेढ़ी-मेढ़ी नदियों का जाल व विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक संपदाओं की प्रचुरता की छवि जेहन में आने लगती है। साथ ही यहां की संस्कृति, पीढ़ियों से चली आ रही विभिन्न परंपराएं, लगभग हर महीने मनाए जाने वाले खेती व प्रकृति से जुड़े कोई न कोई पारंपरिक पर्व-त्योहार व अन्य कई सांस्कृतिक अभिव्यक्तियां चाहे वे गीत-संगीत हो, लोकनृत्य हो, वाद्य यंत्र हों, हस्त एवं शिल्पकला हो या लोककथाएं - इस पर्वतीय हिमालयी राज्य को सही मायनों में 'उत्तराखंड' नाम का स्वरूप प्रदान करते हैं।

प्राचीन समय में इस क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधन व संपदाएं अर्थात जल, जंगल, ज़मीन ही उत्तराखंड के निवासियों की आजीविका के मुख्य स्रोत रहे हैं और यहां की विभिन्न लोकशैलियां और पर्व-त्योहार इनके मनोरंजन के साधन। इन्सान और जानवरों की रोज़मर्रा की ज़रूरत की चीज़ें इन्हीं जंगलों, नदियों और सीढ़ीदार खेतों से उपलब्ध होती थीं। लोग इन संसाधनों का दोहन उतना ही करते थे जितने की उन्हें खुद के लिए और अपने जानवरों के लिए ज़रूरत होती थी। जल-जंगल-ज़मीन पर सबका साझा स्वामित्व होने के कारण लोग इनका संरक्षण भी सामूहिक रूप से करते थे। मिसाल के तौर पर सत्तर के दशक में शुरू हुए वन संरक्षण आंदोलनों में विश्वविख्यात 'चिपको आंदोलन' एक जीता-जागता उदाहरण है जिसका मकसद था उत्तराखंड के जंगलों में पेड़ों को कटने से बचाना। इस आंदोलन के तहत जब कोई पेड़ काटने आता तो पहाड़ के लोग खासकर महिलाएं पेड़ों पर चिपक जातीं और कहतीं कि पेड़ काटने से पहले हमें काटो। धीरे-धीरे इस आंदोलन ने साझी परंपरा और विरासत का रूप ले लिया और इन पेड़ों को कटने से बचाने की इस अनोखी परंपरा को देश के अन्य राज्यों में भी बड़े पैमाने पर अपनाया गया।

औपनिवेशिक काल में हिमालयी क्षेत्र के जंगलों की लकड़ियां रेलवे नेटवर्क के विस्तार के लिए एकमात्र सबसे बड़ा संसाधन हुआ करतीं थीं और साथ ही कई अन्य कार्यों में लकड़ी का इस्तेमाल होने के कारण बड़े पैमाने पर पेड़ काटे जाने लगे। दुर्गम जगहों से पेड़ों की ढुलाई के लिए सड़कों का निर्माण होने लगा। सन् 1864 में ब्रिटिश हुकूमत ने अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए पहली बार वन विभाग की स्थापना की। सन् 1869 से 1885 के दौरान सिर्फ 16 सालों में 6.5 मिलियन (लगभग 65 लाख) रेलवे स्लीपर इन जंगलों की लकड़ियों से तैयार किए गए। 19वीं सदी के आरंभ में वन विभाग ने जंगलों का व्यावसायीकरण शुरू कर दिया और आम जनता का वनों में प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाने लगा। वन विभाग द्वारा उठाए जा रहे जन-विरोधी कदमों से लोगों के पारंपरिक अधिकारों का हनन होने लगा। लोगों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था क्योंकि आग जलाने की लकड़ी, खेती के औज़ार व घर बनाने के लिए वनों से जो लकड़ी और अन्य सामग्री उपलब्ध होती थी उस पर रोक लगने लगी थी। धीरे-धीरे लोगों में वन विभाग के प्रति आक्रोश उत्पन्न होने लगा। जिन जंगलों से लोगों की जीविका चलती थी उन जंगलों का व्यावसायिक उपयोग होने लगा। ब्रिटिश हुकूमत के नौकरशाह इन जंगलों पर अपना अधिकार जताने लगे। ब्रिटिश राज समाप्ति के बाद भी व्यावसायिक उद्देश्य से वनों की अंधाधुंध कटाई जारी रही।

सन् 1959 से 1969 के बीच ही लगभग 6500 हेक्टेअर जंगल काटे गए। सन् 1972 से 1991 तक इस क्षेत्र में 64 प्रतिशत वनों का कटान हुआ। पहाड़ की अर्थव्यवस्था की कर्णधार जोकि महिलाएं थीं, उन्हें इस तबाही के लिए भारी कीमत चुकानी पड़ रही थी। पहले जहां महिलाओं को जलाने की लकड़ी बीनने के लिए सिर्फ आधा-एक किलोमीटर जाना पड़ता था अब 15-20 किलोमीटर जाना पड़ रहा था। बड़े पैमाने पर पेड़ों के काटे जाने से लोगों का जीना दूभर होने लगा और बरसात में भारी मात्रा में भू-स्खलन भी होने लगा। इन्हीं सारी परेशानियों से आजिज़ आकर और भविष्य की चिंता को देखते हुए सन् 1973 में मंडल और फाटा रामपुर क्षेत्र से 'चिपको आंदोलन' का शंखनाद हुआ। इस आंदोलन की शुरुआत तब हुई जब वन विभाग द्वारा मंडल क्षेत्र के जंगलों में अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरत की चीजों के लिए आम जनता के प्रवेश पर प्रतिबंध लगाया गया और खेल का सामान बनाने वाली एक कंपनी को उन्हीं जंगलों से पेड़ काटने का ठेका दिया गया। एक संस्थान के रूप में सरकार और वन विभाग का व्यवहार और रवैया आम जनता के प्रति निहायत ही पक्षपातपूर्ण था। जिन जंगलों से वहां के बाशिंदों के साझे मूल्य और हित जुड़े थे उनसे उन्हें वंचित किया जा रहा था। प्रतिरोध स्वरूप उपजे साझे संघर्ष को हथियार बनाकर स्थानीय लोगों ने यहीं से वनों के संरक्षण का अभियान शुरू किया और देखते ही देखते यह आंदोलन ढोल-नगाड़ों की गूंज के साथ कई क्षेत्रों में फैल गया। क्षेत्र के लोगों के विरोध को देखते हुए वन विभाग को इन जंगलों से वापस जाना पड़ा। जब वन विभाग इस क्षेत्र में अपनी कारस्तानी में नाकाम हुआ तो वह गौरा देवी के गांव रैणी के जंगलों की तरफ बढ़ा और गौरा देवी के नेतृत्व में असली चिपको आंदोलन यानी पेड़ काटने की स्थिति में पेड़ पर चिपकने की परंपरा शुरू हुई। चिपको आंदोलन से प्रेरित होकर राज्य में आज भी कुछ गतिविधियां चल रही हैं ताकि अधिक से अधिक पेड़ लगाए जा सकें और जंगलों को

कटने से बचाया जा सके। ऐसी ही एक परंपरा 'अक्षय गौरा' नाम से आजकल उत्तराखंड में शुरू हुई है। अक्षय गौरा परंपरा के तहत बच्चों के जन्म के अवसर पर फलदार वृक्ष लगाए जाते हैं।

एक और पर्यावरणीय आंदोलन 'मैती आंदोलन' की शुरुआत सन् 1994 में उत्तराखंड के ग्वालदम क्षेत्र में वनस्पति विज्ञान के छात्र रह चुके कल्याण सिंह रावत के नेतृत्व में हुई। इस परंपरा के तहत शादी के दिन मंत्रोच्चार के साथ दूल्हा-दुल्हन मिलकर दुल्हन के गांव में एक पौधा लगाते हैं और दुल्हन के परिजन और सहेलियां पौधे को पानी देने व इसकी देख-रेख का जिम्मा संभालते हैं। यह परंपरा पहाड़ की नारी का जल, जंगल, ज़मीन से उसके जुड़ाव को दर्शाता है। 'मैती' शब्द मैत से बना है जिसका मतलब मायका होता है और मैती का मतलब मायके वाले। इसलिए लड़की के मायके के पेड़-पौधे भी उसके मायके वालों के समान होते हैं। शादी के दिन दूल्हा-दुल्हन द्वारा मिलकर पेड़ लगाने की यह प्रथा आज समूचे उत्तराखंड और देश के अन्य राज्यों में भी जीवित है और निरंतर चल रही है। कुछ राज्यों में तो इस आंदोलन की गाथा को पाठ्य पुस्तकों में शामिल कर लिया गया है। इस आंदोलन की खबर पढ़कर और इससे प्रभावित होकर कनाडा की पूर्व प्रधानमंत्री आंदोलन के सूत्रधार कल्याण सिंह रावत से मिलने भी आइ ं और कनाडा में भी इस परंपरा की शुरुआत कर चुकी हैं।

आंदोलन के प्रणेता के अनुसार उन्हें इस आंदोलन की आवश्यकता इस लिए महसूस हुई कि उत्तराखंड के समस्त जंगलों को वन विभाग ने अपने कब्ज़े में ले लिया। वनीकरण के नाम पर जितने भी सरकारी वृक्षारोपण अभियान चले वे सारे विफल हो रहे थे। एक ही जगह पर कई बार पेड़ लगाने के बाद भी नतीजा सिफर ही रहता। उन्होंने सोचा कि जब तक लोग वृक्षारोपण अभियान में भावनात्मक रूप से सक्रिय नहीं होंगे तब तक यह अभियान सफल नहीं हो पाएगा और जब लोगों की भावनाएं इस अभियान से जुड़ी रहेंगी तो उनके द्वारा लगाए गए पौधे के चारों ओर बाड़ लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी बल्कि लोग खुद ही उन पेड़ों की रक्षा करेंगे। इस आंदोलन की सफलता का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि 'मैती' नामक यह अभिनव आंदोलन उत्तराखंड के अलावा उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, पंजाब, जम्मू और कश्मीर, राजस्थान और केरल सहित 18 राज्यों के 6000 गांवों तक फैल चुका है और देश से बाहर अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा, नेपाल, थाइलैंड और इंडोनेशिया जैसे देशों में भी अपनी ज़रूरत व उपस्थिति दर्ज करा चुका है।

वन विभाग के तत्वावधान में चले 'वनीकरण' योजना के अंतर्गत समूचे उत्तराखंड में 90 के दशक में बड़े पैमाने पर वनों की चहारदीवारी कर पेड़ लगाने का कार्य शुरू हुआ। इस योजना में वृक्षारोपण की थोड़ी-बहुत कोशिश तो हुई मगर वह पूरी तरह नाकाम रही। आम जनता और उनके जानवरों के लिए वनीकरण क्षेत्र में जाने पर पूरी तरह प्रतिबन्ध लग गया। सरकार व वन विभाग के इस जन विरोधी कार्यों के दुष्परिणाम सामने आने लगे। क्षेत्र वासियों के मन से वनों के सामूहिक संरक्षण की भावना भी जाती रही। जहां वनों में आग लगने की स्थिति में समस्त गांव वाले सामूहिक रूप से आग बुझाने का प्रयास करते थे उल्टे आज वही लोग चोरी-छुपे वनों को आग के हवाले करने लगे हैं। हालांकि सच्चाई भी यही है कि इसका सबसे ज्यादा खामियाज़ा भी आम जनता को ही भुगतना पड़ रहा है।

जानकारों का मानना है कि वन विभाग की ही तरह हमारे देश में कृषि विभाग भी है और जिस प्रकार आम लोगों की ज़मीनों व खेती पर कृषि विभाग का कब्ज़ा या किसी प्रकार का दखल नहीं होता उसी प्रकार जंगलों पर भी आम जनता का ही सार्वजनिक रूप से स्वामित्व व अधिकार होना चाहिए न कि सरकार का। वनों के दोहन और वन संपदा का बड़े पैमाने पर हो रहे ह्रास का अंदाज़ा इस बात से लगाया जा सकता है कि आज के समय में जब कोई मां-बाप अपनी बेटी का ब्याह करते हैं तो इस बात को ध्यान में रखते हुए कि जिस गांव में उनकी बेटी ब्याही जा रही है वहां जंगल गांव से ज़्यादा दूर न हो। अगर जंगल घर के नजदीक होंगे तो स्वच्छ पानी, हवा, जलाने की लकड़ी, जानवरों का चारा व अन्य ज़रूरत की सामग्री आसानी से उपलब्ध हो पाएगी। अगर जानवरों के लिए चारे की पर्याप्त मात्रा में उपलब्धता होगी तो दूग्ध उत्पादों के साथ-साथ खेती के लिए गोबर की खाद भी मिलेगी और बेहतर अन्न उत्पादन होगा। बुजुर्ग लोग बताते हैं कि आज से कुछ दशकों पहले पहाड़ के लोगों को आजीविका के लिए सिर्फ नमक खरीदना पड़ता था। ज़िदगी की बाकी सारी ज़रूरत की चीजें जल, जंगल, ज़मीन व पशुओं से प्राप्त होती थी। जिस परिवार के पास ज़मीन और पशुधन होता उसे ही संपन्न समझा जाता था मगर आज हालात बिल्कुल विपरीत हैं जिसकी वजह से लोगों की मानसिकता भी बदली है और लोग गांवों से शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं।

आज जिस रफ्तार से वैश्विक स्तर पर ग्लोबल वॉर्मिंग का खतरा मंडरा रहा है, जितनी मात्रा में भिन्न-भिन्न जगहों पर दुनिया में जलवायु परिवर्तन हो रहा है, भीषण बाढ़ और सूखे का दंश झेलना पड़ रहा है और जिस पैमाने पर भू-कटाव व भू-स्खलन हो रहा है वह निश्चित ही प्रकृति के बिगड़ते संतुलन का नतीजा है जिसके लिए केवल और केवल मानव निर्मित नीतियां ही ज़िम्मेदार हैं। अगर जंगलों को बचाया जाए और अधिक से अधिक पेड़ लगाए जाएं तो काफी हद तक इस बिगड़ते संतुलन को नियंत्रित किया जा सकता है और इस भूमंडल में जीवन सुरक्षित किया जा सकता है। उत्तराखंड में आज जितने भी जंगल बचे हैं उन्हें जीवित रखने में इन आंदोलनों की बहुत बड़ी भूमिका रही है। इसलिए ज़रूरी है कि पर्यावरण और वन संरक्षण की दिशा में 'चिपको' 'मैती' और 'अक्षय गौरा' जैसे आंदोलनों और परंपराओं को बल दिया जाये। गौरा देवी, कल्याण सिंह रावत, हेमवती नंदन बहुगुणा, चंडी प्रसाद भट्ट व कई अन्य प्रेरणा स्रोतों से सीख लेकर इन जैसे आंदोलनों और परंपराओं को साझी विरासत के एक सशक्त रूप में ढाल कर अपनी आने वाली पीढ़ियों के सुपुर्द कर जाएं। अगर समय रहते इस दिशा में कदम नहीं उठाया गया तो आने वाले कुछ ही वर्षों में वैश्विक स्तर पर तो जो होगा सो होगा, उत्तराखंड ही रूखे पहाड़ - सूखी नदियों का नाम मात्र बन कर रह जाएगा।

मुहब्बत की ज़मीं और तक़सीम का दर्द

■ आशु वर्मा

कैथल, हीर, वारिस शाह और अमृता प्रीतम ...इनमें क्या सम्बन्ध है? इनमें क्या साझा है? इनमें साझा यह है कि ये पंजाब की ज़मीन से पैदा हुए हैं। तीनों ही मोहब्बत और इश्क में पगे रूहानी किस्म की शख्सियत के मालिक हैं। हीर ने इश्क के लिए अपनी जान दी, वारिसशाह ने उसके दर्द को सूफियाना ऊंचाइयों तक पहुंचाया तो अमृता प्रीतम ने हीर, इश्क और पंजाब की साझी तहजीब और तारीख पर सियासी खंज़र के घोंपे जाने के दर्द को बिल्कुल नया फलक और आयाम दिया। उनकी नज़्म में बयान दर्द कैथल के बाशिंदों ने भी जिया। आज़ादी के पहले कैथल पंजाब का हिस्सा था। यह इलाका सिर्फ एक भौगोलिक इलाका नहीं था बल्कि अलग-अलग कौमों, तहजीबों, मज़हब, बोलियों, सूफियों, बेपनाह मोहब्बत, दर्द, तकलीफों और गर्मजोशी को समेटे एक अलग ही शख्सियत रहा है। ऐसी ही शख्सियत कैथल की भी रही है।

लेकिन तकसीम और सियासती फरमानों ने मंज़र बदल दिया। पंजाब के साथ कैथल भी रोया। हिंदू-मुस्लिम गंगा-जमुनी संस्कृति वाला कैथल का इलाका उजड़ने लगा। एक सरहद बना दी गई और उसके 'इधर' और 'उधर' आना-जाना शुरू हुआ। कैथल से भी हज़ारों लोग बाप-दादाओं की पाक ज़मीन को छोड़, माल-असबाब गाड़ियों में लादे, कांख में गठरी दबाये, अपनी औरतों को लुटते देख, खून के आंसू पीते ''उधर'' गये और ऐसे हज़ारों लोग यहां आये। रिफ्यूज़ी कैम्प बनने लगे। कैथल शहर का हर दूसरा और तीसरा बाशिंदा ''रिफ्यूज़ी'' बन कर आया। आज भी यहां के गांवों में अपने मूल बाशिंदों को याद करती न जाने कितनी हवेलियां खंडहर बन चुकी हैं। हज़ारों बाशिंदों के ख्यालों में अभी भी अपने वालिदों या अपने बचपन के घरों, गलियों, मोहल्लों और बाज़ारों को देखने, उनकी दीवारों को एक बार छू लेने, किसी पुराने अमरुद के दरख़्त पर लटक जाने और वहां की हवाओं को फेफड़ों में सोख लेने की कशिश बाकी है। सैंतालीस में आये बच्चों के चेहरों पर झुर्रियां आ गयी हैं। लेकिन तमाम तकलीफों के बावजूद उन सब ने पंजाब की जिजीविषा, हिम्मत, मोहब्बत, तहज़ीब और लगन को इस शहर की हवाओं में घोल सदियों पुराने इस शहर को और भी खूबसूरत बना दिया है। उन्होंने अपने मेहनत से उद्योग, खेती, व्यापार से लेकर साहित्य, शिक्षा और कला तक अपनी पहचान और जगह बनायी है। यह शहर हौसले वाला शहर है और इसे यह हौसला दिया है उजड़ कर आये लोगों ने, यह शहर उन्हें सलाम करता है। यह शहर हीर, वारिस शाह, अमृता प्रीतम और उनकी मोहब्बत को सलाम करता है। यहां से उजड़ कर वहां बसे और वहां से उजड़ कर यहां बसे लोगों के लिए प्रस्तुत है अमृता प्रीतम की यह नज़्म जो उन्होंने विभाजन के बाद लिखी थी... इस नज़्म में उन्होंने वारिस शाह को संबोधित करते हुए कहा है कि जब पंजाब में हीर नाम की एक बेटी रोयी थी तो उन्होंने उसके दर्द को संगीत में ढालकर लोकगीत बना दिया...आज जब विभाजन के समय लाखों बेटियां रो-चीख रही हैं तो वो बुला रही हैं वारिस शाह को और पूछ रही हैं कि कहां हैं उनके गीत।

आज वारिस शाह से कहती हूं
अपनी क़ब्र में से बोलो
और इश्क की किताब का
कोई नया वर्क़ खोलो
पंजाब की एक बेटी रोई थी
तूने एक लंबी दास्तान लिखी
आज लाखों बेटियां रो रही हैं,
वारिस शाह तुम से कह रही हैं
ए दर्दमंदों के दोस्त
पंजाब की हालत देखो
चौपाल लाशों से अटा पड़ा है,
चिनाब लहू से भरी पड़ी है
किसी ने पांच दरियाओं में
एक ज़हर मिला दिया है
और यही पानी
धरती को सींचने लगा है
इस ज़रखेज धरती से
ज़हर फूट निकला है
देखो, सुर्खी कहां तक आ पहुंची
और क़हर कहां तक आ पहुंचा
फिर ज़हरीली हवा वन जंगलों में चलने लगी
उसमें हर बांस की बांसुरी
जैसे एक नाग बना दी
नागों ने लोगों के होंठ डस लिये
और डंक बढ़ते चले गये
और देखते देखते पंजाब के
सारे अंग काले और नीले पड़ गये
हर गले से गीत टूट गया
हर चरखे का धागा छूट गया
सहेलियां एक दूसरे से छूट गईं
चरखों की महफिल वीरान हो गई
मल्लाहों ने सारी कश्तियां
सेज के साथ ही बहा दीं
पीपलों ने सारी पेंगें
टहनियों के साथ तोड़ दीं
जहां प्यार के नगमें गूंजते थे
वह बांसुरी जाने कहां खो गई
और रांझे के सब भाई
बांसुरी बजाना भूल गये
धरती पर लहू बरसा
क़ब्रें टपकने लगीं
और प्रीत की शहज़ादियां
मज़ारों में रोने लगीं
आज सब क़ैदी बन गये
हुस्न इश्क के चोर
मैं कहां से ढूंढ के लाऊं
एक वारिस शाह और

भारत का स्वर्णयुग

■ मुक्तिबोध

...पिछले अंक से जारी

द्वितीय साम्राज्य की स्थापना

ईसा की चौथी और पांचवी शताब्दी में भारत देश की सर्वांगीण उन्नति हुई। दर्शन, साहित्य, विज्ञान ने नयी मंज़िलें तै कीं। धार्मिक कलह का कहीं नाम भी नहीं था। देश का आर्थिक उत्कर्ष अपने चरम शिखर पर पहुंच रहा था। उस समय, चंद्रगुप्त तथा स्कन्दगुप्त जैसे प्रचंड पराक्रमी सम्राट हुए। कालिदास जैसे महाकवि, आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, वराहमिहिर जैसे विज्ञानविद् तथा असंग, वसुबन्धु, दिङनाग, ईश्वर-कृष्ण जैसे महान दार्शनिक हुए। वह युग साहसपूर्ण चिंतन, साहसपूर्ण व्यापार, साहसपूर्ण कार्य-शक्ति, तथा कोमल भावपूर्ण कला का युग था।

द्वितीय साम्राज्य

ब्राह्मण धर्म के पुनरुत्थान की जो प्रक्रिया शुंग सातवाहन काल में शुरू हुई थी, उसे वाकाटकों ने, जो मालवा, विदर्भ और छत्तीसगढ़ के शासक थे, तथा नागवंशीय राजाओं ने जारी रखा। ये नागवंशीय राजा गंगा और घाघरा नदियों के बीच के प्रदेश में राज्य करते थे। वाकाटक नरेश ब्राह्मण वंश के थे। प्रतिष्ठान की सात-वाहन सत्ता क्षीण होने पर, सन् 255 ई. में विन्ध्यशक्ति नामक एक पुरुष ने वाकाटक राज्य की स्थापना की थी। उसके पुत्र प्रवरसेन ने राज्य-विस्तार किया तथा उसे सूचित करने के लिए अश्वमेध यज्ञ किया। किंतु, मगध के गुप्त वंश के उत्कर्ष के साथ, वाकाटकों की श्री लुप्त हो गयी।

गुप्तवंश

चंद्रगुप्त प्रथम

उधर, जाने कैसे, मगध में एक नयी राज्य-शक्ति का उत्थान हुआ। हम नहीं जानते कि गुप्त-वंश के संस्थापक चंद्रगुप्त के पूर्वज कौन थे, क्या थे!! इतना-भर ज्ञात है कि मगध के एक वीर पुरुष चंद्रगुप्त का सन् 320 में पाटलिपुत्र में राज्याभिषेक हुआ। उसने इतिहास-प्रसिद्ध लिच्छवी वंश की राजकुमारी कुमारदेवी से विवाह किया। चंद्रगुप्त के अनन्तर, उसका पुत्र समुद्रगुप्त सिंहासन पर बैठा।

समुद्रगुप्त

समुद्रगुप्त ने पिता का राज्य दूर-दूर तक फैला दिया। इलाहाबाद में एक लौह स्तंभ है, जिसमें उसकी ज्वलंत महान पराक्रमों तथा सांस्कृतिक उपलब्धियों का विस्तृत वर्णन किय गया है। ईसवी सन् 335 के लगभग उसने शासन-सूत्र संभाले; और, उसके तुरंत बाद, वह दिग्विजय के लिए निकल पड़ा। पहले वह पश्चिम की ओर बढ़ता गया। उसके तूफानी हमलों से एक के बाद एक अनेक राजा धराशायी होते गये। उसने ग्वालियर तक धावा मारा, पंजाब में करनाल के जिले उसके राज्य की सीमा बन गये।

उसके बाद मगध लौटते हुए, उसने दक्षिण की ओर क़दम बढ़ाये। वह रायपुर-सम्बलपुर के मार्ग से दक्षिण की ओर बढ़ चला। बीच के बहुत-से जंगली और पहाड़ी क्षेत्रों के राज्यों को वह सर करता गया। गोदावरी तट के आसपास के नरेशों को जड़ से उखाड़कर, उसकी सेना कृष्णा नदी तक पहुंची। वहां से उसने दक्षिण के अन्य प्रदेशों पर धावे किये। पूरा दक्षिण उसके भय से कांप उठा। कन्याकुमारी और उसके आसपास का प्रदेश छोड़, शेष सब भाग उसके साम्राज्य का अंग बन गया।

वह 'प्राचीन भारत का नैपोलियन' कहा जाता है। पहाड़ों-जंगलों को पार करता हुआ, अनेक राज्यों का उन्मूलन करते हुए उसने 3000 मील की यात्रा की। इस युद्ध-यात्रा में एक बार भी उसकी हार नहीं हुई, एक बार भी उसके कदम पीछे नहीं हटे।

उसे नैपोलियन कहना सर्वथा उचित है, इसलिए कि नैपोलियन की भांति ही वह रण-कुशल था। सेना का नेतृत्व वह स्वयं करता था। उसका युद्ध संचालन अद्भुत था। वह युद्ध-विद्या में अपने ज़माने से आगे बढ़ा हुआ था। उसकी वीरता, पराक्रम, और युद्ध-कौशल को देखकर सुदूर पश्चिमी और सुदूर पूर्वी भारतीय प्रदेश घबरा गये। वहां के राजाओं ने, अपनी अधीनता सिद्ध करने के लिए उसके दरबार में उपहार भेजे। उन्हें डर था कि यदि स्वेच्छा से हम उसके मांडलिक नहीं हो जाते तो हमें मौत का सामना करना पड़ेगा, क्योंकि सम्राट् समुद्रगुप्त जितना उदार है, उतना ही कठोर भी है। जिन राजाओं ने उसके यहां उपहार भेजे, उनमें पश्चिमी भारत के शक तथा कुषाण शासक भी थे। गुप्त साम्राज्य की पश्चिमी सीमा पर रहने वाले, गण-राज्य, जैसे आर्जुनायन, यौधेय, प्रार्जुन, सनकानीक, मालव इत्यादि जातियों के अतिरिक्त, आसाम और दक्षिणी बंगाल के राज्य जैसे कामरूप, समतट इत्यादि और हिमालयीन क्षेत्र के नेपाल ने भी समुद्रगुप्त के सार्वभौम प्रभुत्व को स्वीकार कर लिया। ऐसी स्थिति में समुद्रगुप्त 'महाराजाधिराज' की पदवी धारण करे तो इसमें आश्चर्य ही क्या है!!

उसने अपने दिग्विजयत्व को सिद्ध करने के लिए अश्वमेध यज्ञ किया। हमें उसकी बहुत-सी सुंदर मुद्राएं प्राप्त होती हैं। उनमें उसकी प्रतिमाएं अंकित हैं। एक में वह धनुष-बाण लिये हुए है। दूसरे में उसके पैर सिंह की ग्रीवा पर हैं। तीसरे में समुद्रगुप्त वीणा लिए तल्लीन बैठा है। समुद्रगुप्त जितना बड़ा योद्धा था, उतना ही अधिक वह कला-निपुण था, शास्त्रों में पारंगत था। संगीत, काव्य, उसे विशेष प्रिय थे। उसका शरीर हृष्ट-पुष्ट था, उसकी मुखाकृति सौम्य थी। वह ब्राह्मण मत का अनुयायी था, किंतु बौद्धों के प्रति समान भाव रखता था। प्राचीन भारत के स्वर्णयुग का वह प्रवर्तक था।

शक सत्ता का अंत

सन् 380 में समुद्रगुप्त की मृत्यु होने पर, उसके पुत्र चंद्रगुप्त द्वितीय ने सिंहासन ग्रहण किया। उसके राजत्वकाल में, गुप्त साम्राज्य अपने उत्कर्ष और वैभव के चरम शिखर पर पहुंच गया। इस शासक ने पश्चिमी भारत के शक राज्यों पर आक्रमण कर दिया। उनको जड़

से उखाड़कर उसने पश्चिमी समुद्र तट अपने हाथ में ले लिया।

पश्चिमी समुद्र तट गुप्त साम्राज्य के लिए बहुत वरदान सिद्ध हुआ। वहां बड़े-बड़े बंदरगाह थे, जैसे भृगुकच्छ, जो यूरोप तथा एशिया के देशों से व्यापार करते थे। इसलिए, शक एक लंबे समय तक वहां जमे रहे। पश्चिमी समुद्र तट पर अधिकार करके चंद्रगुप्त द्वितीय ने अपने साम्राज्य के आर्थिक उत्कर्ष को और बढ़ा दिया। गुप्त सम्राट् का वैभव जगमगा उठा। पश्चिमी भारत के समीप रहने के लिए उसने, एक और राजधानी स्थापित की। उज्जयिनी मगध साम्राज्य की दूसरी राजधानी हो गयी। अब योरुप के व्यापारियों का माल सारे भारत में फैलने लगा। गुप्त सम्राट् के दरबार में योरोपीय विचार भी आए। शकों के अधीन जो सौराष्ट्र था, उसकी विजय के उपलक्ष्य में, चंद्रगुप्त द्वितीय ने सोने का सिक्का चलाया। अब उसने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। रघुवंश और शाकुन्तल का रचयिता कवि कालिदास उसी की राजसभा में था। प्रथम चीनी यात्री फ़ाहियान इसी के दरबार में आया था। उसने तत्कालीन जन-जीवन का इन शब्दों में वर्णन किया है-''जनता बहुसंख्यक और सुखी है¨¨किसी को न्यायाधीशों के सामने नहीं जाना पड़ता, राजा अपने शासन में किसी अपराधी को मृत्युदंड या अन्य किसी प्रकार का शारीरिक दण्ड नहीं देता। अपराधियों पर केवल जुर्माना किया जाता है। हर मुक़दमे की वास्तविक स्थिति के अनुसार यह जुर्माना कम या ज़्यादा होता है। कई बार राजद्रोह का दुःस्साहस करने वालों का भी केवल दाहिना हाथ काट दिया जाता है। राजा के अंगरक्षकों और सभी सेवकों को वेतन मिलता है।'' फ़ाहियान ने प्रशासन की भी प्रशंसा की है।

कुमारगुप्त

चंद्रगुप्त द्वितीय के अनंतर, उसका पुत्र कुमारगुप्त सम्राट् हुआ। उसने पिता के राज्य को बनाये रखा। उसने 414-15 ई. से लेकर चालीस वर्ष तक शासन किया। उसके काल में साम्राज्य में शांति और सुरक्षा का वातावरण था; किंतु, उसके राजत्वकाल के अंतिम भाग में अज्ञात शत्रुओं ने भारत पर हमले शुरू किये।

हूणों के आक्रमण

हूण मध्य एशिया की एक घुमक्कड़ जाति थी। वह अचानक चंचल हो उठी और दो दलों में विभाजित हो गयी। अश्वारोही हूणों का एक दल मारकाट मचाता हुआ, सभ्यताएं और राज्य नष्ट-भ्रष्ट करता हुआ, पश्चिमी एशिया पार करके, यूरोप पर टूट पड़ा। दूसरा, अश्वारोही दल भारत के पश्चिमी भाग में घुस गया। मार-काट, तोड़-ताड़, आगजनी करते हुए वह जनता को त्रस्त करने लगा। हूण बहुत क्रूर और बर्बर जाति मानी गयी है। मगध सम्राट् कुमारगुप्त ने अपने युवराज स्कंदगुप्त को हूणों की रोक-थाम के लिए भेजा। हूणों पर निर्णायक विजय मिलने के पूर्व ही, कुमारगुप्त की मृत्यु हो गयी।

स्कन्दगुप्त

युवराज काल में ही स्कन्दगुप्त हूणों से युद्ध कर चुका था। सन् 456 में सम्राट् होने पर उसने शत्रु नाश का कार्य जारी रखा। वह बहुत कर्तव्य-परायण और पराक्रमी सम्राट् था। उसने हूणों के प्रतिरोध करने में अपनी सारी ताकत लगा दी। आखिर, जीत स्कन्दगुप्त की ही हुई। हूण भारत में अपना पैर न जमा सके। भारत की धाक उत्तर-पश्चिमी के क्षेत्रों में भी फैल गयी। उसका सारा समय युद्ध में बीता। सेनाओं के संगठन पर अपार धन खर्च हुआ। फलतः चंद्रगुप्त द्वितीय के काल में, सम्राट् के दरबार की जो शान थी वह जाती रही। स्कंदगुप्त ने सन् 468 तक शासन किया।

उसकी मृत्यु के 50 वर्ष बाद, गुप्त साम्राज्य का नाश हो गया। ऐसा क्यों हुआ!! इसका एक कारण तो यह था कि हूणों के आक्रमण के कारण, साम्राज्य तथा उसके समर्थक सामंतों को बहुत त्याग करना पड़ा था। सामंत इतने अधिक त्याग के लिए तैयार न थे। फलतः, असंतुष्ट सामंतों के षड्यंत्र और साथ ही राजद्रोह ने गुप्त साम्राज्य को चौपट कर दिया।

साम्राज्य बंट गया

गुप्त साम्राज्य चौपट भी हुआ तो अपने ढंग से हुआ। शुरू के पचास सालों में तो हमें पुरुगुप्त इत्यादि सम्राट् दिखायी देते हैं। बाद में, इस साम्राज्य के दो भाग हो गये। एक मगध, दूसरा मालव। मध्यप्रदेश के वाकाटक राजाओं ने अपनी स्वतंत्रता पुनः स्थापित कर ली। इस प्रकार, अन्य सामन्त भी अलग होने की तैयारी कर रहे थे।

शत्रुओं की बाढ़

स्कंदगुप्त की उदार नीति, बुद्धिमत्ता के फलस्वरूप, सामंतगण किसी-न-किसी तरह एक साथ जमे थे। स्कन्दगुप्त के प्रचंड पराक्रम के फलस्वरूप, हूणों के आक्रमणों की रोक-थाम भी हो चुकी थी। भारत के सामंतों ने अब संतोष की सांस ली। वे हूणों से फ़ुरसत पाकर आपसी झगड़ों में अपनी वीरता बताने लगे।

उधर, हूण भारत के संबंध में बहुत कुछ जान चुके थे। भारत की ओर से मुंह फेरकर उन्होंने सन् 484 के लगभग ईरान को तहस-नहस कर दिया। वहां अपना साम्राज्य स्थापित किया और बल्ख को अपनी राजधानी बनाया। उसके लगभग 18 साल बाद, उन्होंने भारत पर दुबारा हमले शुरू किये। सन् 502 में अपने सरदार तोरमाण के नेतृत्व में उन्होंने पश्चिमी भारत पर धावा मारा और ऊधम करते हुए उन्होंने मालवे तक को अपने कब्जे में कर लिया। सन् 502 में, तोरमाण की मृत्यु होने पर, मिहिरगुल उनका नेता हो गया।

यशोधर्मन

मिहिरगुल खूंखार आदमी था। देश में उसके अत्याचार बहुत बढ़ गये। उस समय भारत में भी यशोधर्मन नामक एक नेता पैदा हुआ, जिसने हूणों को मालवे से निकाल फेंका। मिहिरगुल मालवे से भागा। धोखा देकर उसने काश्मीर पर कब्जा जमा लिया।

यशोधर्मन और नरसिंहगुप्त

यशोधर्मन कौन था? क्या वह मालवे का राजा था? मध्यप्रदेश के पश्चिमोत्तर सीमा पर मंदसौर नामक एक नगर में यशोधर्मन का एक स्तंभ है। उसमें बताया गया है कि वह बहुत पराक्रमी राजा था, जिसका राज्य बहुत दूर-दर तक फैला हुआ था। लेकिन, उसके सिक्के वगैरह कुछ नहीं मिलते। गुप्तकुल के ह्रासकाल में एक दूसरा चीनी यात्री हुएनत्सांग भारत आया था। उसने लिखा है कि गुप्तवंश के नरसिंह-गुप्त बालादित्य ने हूणों को मार भगाया था। ऐसी स्थिति में यही कहा जा सकता है संभवतः, दोनों ही ने मिहिरगुल को, अपनी सम्मिलित शक्ति द्वारा, मालवे से हटा दिया था।

गुप्त साम्राज्य सन् 320 में स्थापित होकर सन् 488 में छिन्न-भिन्न हो गया। किंतु इस काल में ही, उसने जो अभूतपूर्व सफलताएं प्राप्त कीं उसका हाल जानना ज़रूरी है।

हर्षवर्धन

प्राचीन भारत की अंतिम दीपशिखा

प्राचीन भारत अपनी उन्नति के चरम शिखर पर पहुंचकर अब

अस्त-प्राय हो रहा था कि इतने में एकाएक वह अपनी सारी शक्ति और गरिमा की स्वर्णिम किरणें सब ओर विकीरित करने लगा। वह प्रताप हर्षवर्धन नामक एक सम्राट् का था, जिसने अपने व्यक्तित्व और कार्य के द्वारा महानता का नया उदाहरण सामने रखा।

अंतिम आलोक

प्राचीन भारत की दीप्ति एक बार फिर तीव्र हो उठी। वह ईसा की छठी सदी थी। सब ओर अराजकता छायी हुई थी। कल तक के सामन्त आज नवीन राजवंश स्थापित करने का उद्योग करते हुए एक-दूसरे से मुठभेड़ें कर रहे थे कि इसी बीच प्रकाश फैलने लगा। एक ऐसी राज्य-शक्ति का उदय हुआ कि जिसने प्राचीन भारत की गौरवपूर्ण परंपरा की धारा को और आगे बढ़ाना चाहा। लगा कि भारत की सांस्कृतिक शक्ति अभी भी सप्राण है।

प्रभाकर वर्धन

गुप्त साम्राज्य के ह्रास काल में जो राजवंश सामने आये उनमें (पंजाब में) स्थानेश्वर का वर्धन-वंश भी था। छठी सदी के अंत में वहां प्रभाकर वर्धन नामक एक वीर पुरुष शासन करता था। उसने गांधार, गुजरात तथा मालव के हूण शासकों को नष्ट किया। इस प्रकार पश्चिमी भारत उसके अधिकार में आ गया।

प्रभाकर वर्धन के दो बेटे थे-राजवर्धन और हर्षवर्धन। एक पुत्री थी-राज्यश्री। सन् 605 में अचानक जब हूणों ने स्थानेश्वर पर चढ़ाई की तो प्रभाकर वर्धन ने अपने पुत्र राजवर्धन को उनका मुकाबला करने के लिए भेजा। हर्षवर्धन छोटा था। वह भी भाई की सेना के साथ गया। किंतु उसे पास ही के एक वन में छोड़ दिया गया, जहां वह शिकार खेलता रहा। इस बीच राजवर्धन और हूण दोनों को लड़ाई का जोश चढ़ता गया। राजवर्धन उन्हें पश्चिम की ओर खदेड़ता हुआ आगे बढ़ा। इसी बीच, शिकार खेलते हुए हर्षवर्धन को सूचना मिली कि पिताजी की मृत्यु हो गयी है। शोकग्रस्त हर्ष राजधानी में पहुंचा। वह राजकाज देखने लगा। उधर, राजवर्धन हूणों पर विजय प्राप्त करके ज्यों ही राजधानी लौटा तो उसे दुःख-पूर्ण समाचार मिले। उसने निश्चय किया कि वह संन्यासी हो जाएगा, हर्षवर्धन के समझाने-बुझाने पर राजवर्धन स्थानेश्वर का राजा घोषित कर दिया गया।

राज्यश्री

किंतु, अभी नये संकट आने वाले थे। इन भाइयों की सुंदर तथा सुशिक्षित बहन राज्यश्री कन्नौज के मौखरिवंश के राजा गृहवर्मा को दी गयी थी। यह देखकर कि स्थानेश्वर के राजा हूणों से भिड़े हुए हैं, मालवे के राजा देवगुप्त ने कन्नौज पर हमला किया। गृहवर्मा को मार डाला। उसकी स्त्री राज्यश्री को पकड़ लिया। वह वीर स्त्री थी। उसके शील को नष्ट करना मुश्किल था। उसे जेल में डाल दिया गया, तरह-तरह की यातनाएं उसे दी जाने लगीं।

राजवर्धन अपनी बहन के लिए दौड़ पड़ा। उसने मालवे पर चढ़ाई की। इस बीच, बंगाल का राजा शशांक मालवे की सहायता के लिए आया। शशांक ने संधि-वार्ता की बात चलायी। राजवर्धन सम्मेलन में पहुंचा ही था कि उसे धोखे से मार डाला गया।

इस गड़बड़ी में राज्यश्री किसी-न-किसी तरह जेल-कोठरी से भाग निकली। वह विंध्याचल के एक वन में पहुंची। वहां दिवाकरमित्र नामक एक बौद्ध भिक्षू के आश्रम में उसे शरण मिली।

हर्षवर्धन ने ज्यों ही अपने भाई की मृत्यु का समाचार सुना, वह मालवे पर चढ़ दौड़ा। उसकी राजसत्ता को धूल में मिला दिया। और, अब वह बहन की तलाश करने लगा।

खोजते-खोजते वह विन्ध्य-वन में दिवाकरमित्र के आश्रम के निकट पहुंचा, जहां चिता जल रही थी। राज्यश्री जल मरने के लिए उसकी प्रदक्षिणा कर रही थी कि इतने में हर्षवर्धन ने बहन को पुकारा।

हर्षवर्धन

उनके मिलने के अश्रुओं का वर्णन नहीं किया जा सकता। दिवाकरमित्र ने विदा होते हुए राज्यश्री और हर्ष से कहा कि वे बौद्ध धर्म के अनुयायी हो जाएं। हर्ष ने कहा कि वह बौद्ध संघ में सम्मिलित हो जाएगा किंतु लक्ष्य पूरा करने के बाद, अभी नहीं।

राज्यश्री को लेकर हर्ष कन्नौज गया। अब दो सिंहासन खाली थे। एक स्थानेश्वर का, दूसरा कन्नौज का। राज्यश्री की कोई संतान नहीं थी। इसलिए उसने अपने भाई से राज्य-सूत्र स्वीकार करने के लिए कहा। फलतः, दोनों राज्य एक हो गये। हर्ष ने स्थानेश्वर के स्थान पर अपनी राजधानी कन्नौज कर ली।

शत्रुओं का दमन

हर्ष जानता था कि सामंतों पर भरोसा करना गलत है। केवल शस्त्र-बल ही उन्हें मना सकता है। पिता के ज़माने से चले आने वाले युद्धों के अनुभवों के फलस्वरूप, अब हर्ष के पास 5 हज़ार हाथी, 20 हज़ार घुड़सवार तथा 50 हज़ार पैदल सिपाहियों की रणकुशल सेना थी। इस सेना के द्वारा वह आगे के छह साल तक युद्ध करता रहा। बंगाल और आसाम के पश्चिमी भागों से लेकर उसका राज्य नर्मदा के किनारे-किनारे होता हुआ सारे उत्तर भारत में फैल गया। सिंधु, दक्षिणी पंजाब और राजस्थान उसके राज्य में नहीं थे। तब तक उसकी सेना में 1 लाख घुड़सवार तथा 60 हज़ार हाथी हो गये। रथ-सेना उसने निकाल दी। यह बात सन् 612 की है।

अगले आठ साल तक हर्ष ने युद्ध नहीं किया। किंतु, दिग्विजय की इच्छा से प्रेरित होकर वह दक्षिण-विजय के लिए निकला। नर्मदा-तट के निकट के किसी स्थान पर दक्षिण के सम्राट् पुलुकेशिन से उसका मुकाबला हुआ। किंतु, हर्ष को सफलता नहीं मिल पायी। पुलुकेशिन की शक्ति देखकर वह पीछे लौट गया।

किंतु, प्रतापी पुलुकेशिन की सत्ता को चुनौती देने वाले हर्ष की कीर्ति सुनकर, दक्षिण प्रदेश के चोलों ने, केरलों और पांड्यों ने हर्ष से मित्रता कर ली। पुलुकेशिन से ये राज्य डरते भी थे। हर्ष का पुलुकेशिन से युद्ध करना एक तरह से स्वाभाविक भी था, क्योंकि पुलुकेशिन का साम्राज्य काठियावाड़ और मालवे को अंतर्भूत कर चुका था। पूरे उत्तर भारत को अधीन करने के लिए, उसकी सत्ता को चुनौती देना आवश्यक था।

हर्ष ने दक्षिण के गंजम राज्य पर आक्रमण किया और उसे अपने राज्य में शामिल कर लिया। इसके चौदह सालों बाद हर्ष ने गुजरात पर चढ़ाई करके वलभी के मैत्रक राजा ध्रुवसेन को भी अपना माण्डलिक बना लिया।

हुएनत्सांग

सन् 620 तक हर्ष ने अपने लिए एक विशाल साम्राज्य क़ायम कर लिया था। चीनी यात्री हुएनत्सांग इसी काल में आया था। उसने तत्कालीन भारत का वर्णन किया है। प्रभाकरवर्धन के काल में स्थानेश्वर राज्य का वर्णन करते हुए वह लिखता है-

''यहां की भूमि उपजाऊ है, अनाज बहुत पैदा होता है। लोगों

का व्यवहार बहुत रूखा है और उनमें एक-दूसरे के प्रति लगाव नहीं है। परिवार धनी हैं, और विलासिता का जीवन व्यतीत करते हैं। वे जादू-टोने के बहुत आदी हैं और उन लोगों का बहुत सम्मान करते हैं जिनमें कोई असाधारण योग्यता हो।'' यह प्रभाकरवर्धन के राजत्वकाल के अंतर्गत पंजाब का वर्णन है। हुएनत्सांग ने हर्षवर्धन के काल का भी वर्णन किया है। वह कहता है कि बेगार किसी से नहीं ली जाती थी। राजा की निजी संपत्ति चार भागों में विभाजित थीं एक राज्य-शासन चलाने और यज्ञदान आदि पर खर्च होती थी। दूसरी से राज-कर्मचारियों का वेतन दिया जाता था। तीसरी से असाधारण प्रतिभाशाली व्यक्तियों को पुरस्कार दिया जाता था। चौथी धार्मिक संस्थाओं पर खर्च की जाती थी, जिससे सद्‌गुणों को प्रात्साहन मिलता था। लोगों पर कर का भार बहुत कम था। व्यक्ति को सरकार के लिए जो भी काम करने पड़ते थे, वह कष्टसाध्य नहीं थे। सभी लोग निर्विघ्न होकर अपनी संपत्ति का भोग करते थे। सभी लोग शांति और सुरक्षा के वातावरण में खेती-बारी करते थे। उपज का छठा भाग भूमिकर के रूप में दिया जाता था। थोड़ी-सी चुंगी अदा करने पर कोई भी व्यक्ति व्यापार के लिए जल और स्थल भागों का उपयोग कर सकता था। व्यापारियों को बहुत लाभ होता था। सार्वजनिक निर्माण कार्यों के लिए यह आवश्यक होता था कि प्रत्येक व्यक्ति अपने खुद के काम से सहायता करें, किंतु साथ ही सबको उचित पारिश्रमिक भी मिल जाता था।

हुएनत्सांग के इस वक्तव्य से यह स्पष्ट होता है कि उन दिनों प्रजा सुखी थी और राजकर्मचारी उसके हितों का ध्यान रखते थे। हुएनत्सांग ही के विवरण से हमें मालूम होता है कि उन दिनों शहरों के बाज़ारों में बड़ी रौनक रहा करती थी। सोने-चांदी के सिक्के चलते थे। कभी-कभी सिक्कों के स्थानों पर मोतियों और कौड़ियों का प्रयोग होता था। समुद्र पार के देशों के साथ खूब व्यापार होता था। भारतीय मल्लाह लंका का चक्कर लगाकर चीन तक पहुंचा करते थे।

हत्याएं, मारपीट आदि की घटनाएं बहुत कम होती थीं। किंतु, यात्राएं अब उतनी सुरक्षित नहीं रही थीं जितनी कि गुप्तकाल में। हुएनत्सांग को कई बार सड़कों पर जंगलों में लुटेरों का सामना करना पड़ा था।

यद्यपि नियमतः स्त्रियों की स्वतंत्रता का अपहरण हो चुका था, किंतु नारी-स्वतंत्रता की पुरानी परंपरा अभी भी चल रही थी। अस्पृश्यता फैल रही थी।

हर्ष का चरित्र

भारत के महान् सम्राटों में हर्ष की गणना होनी चाहिए, इसलिए नहीं कि वह विलक्षण विजेता था-समुद्रगुप्त उससे भी बड़ा सैनिक था-वरन् इसलिए कि उसमें गहरी मनुष्यता थी। धर्म-प्रचार का प्रज्वलन्त उत्साह जो अशोक में था, वह हर्ष में नहीं था; क्योंकि उसके लेखे बौद्ध और ब्राह्मण तथा अन्य धर्म-सभी भारत के आध्यात्मिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करते थे। उसका जीवन अनेक दुःखों और संकटों में बीता था। ज़िंदगी की आंच उसको लग चुकी थी।

वह शुरू में शैवधर्म का अनुयायी था। किंतु उसकी बहन और भाई, राज्यश्री और राज्यवर्धन, दोनों बौद्ध धर्म को मानने वाले थे। बाद में वह भी बौद्ध हो गया। वह धर्म के तत्व को अधिक समझता था। भारत की धार्मिक स्थिति को भी वह खूब समझता था।

वह स्वयं विद्वान था। उसके दरबार में शास्त्रार्थ हुआ करता-विशेषकर बौद्धों और ब्राह्मणों में। एक बार का किस्सा है कि चीनी यात्री हुएनत्सांग उसके दरबार में बैठा था। हर्ष ने सभासदों को संबोधित करके कहा कि विद्वत्‌गण हुएनत्सांग से शास्त्रार्थ करें। हुएनत्सांग स्वयं त्रिपिटकाचार्य था। किसी ने हुएनत्सांग से शास्त्रार्थ करने का साहस नहीं किया। इसकी पार्श्वभूमि यह थी कि अपनी यात्रा में हुएनत्सांग को कुछ मुसीबत का सामना करना पड़ा था। सम्राट् ने घोषणा करा दी थी कि जो भी चीनी त्रिपिटकाचार्य को कष्ट देगा, उसे कठोर-से-कठोर दंड दिया जाएगा।

हर्ष हर पांचवे साल महापंडितों का सम्मेलन कराता। उसमें वह स्वयं भाग लेता। सम्मेलन में शास्त्रार्थ और तर्क और वितर्क होते। इनमें से एक सम्मेलन में चीनी त्रिपिटकाचार्य हुएनत्सांग भी मौजूद था। इसी प्रकार हर पांचवे वर्ष वह प्रयाग में बहुत बड़ी धन-राशि का दान देता। यह दान सब धर्मों के साधुओं तथा उनके अतिरिक्त निर्धन तथा अभावग्रस्त लोगों को दिया जाता। यह दान-महोत्सव 75 दिनों तक चलता!! छठे दान महोत्सव में स्वयं हुएनत्सांग उपस्थित था। उसने लिखा है-''पांच वर्ष का समस्त संचित धन समाप्त हो जाता था। घोड़ों, हाथियों और सैन्य सामग्री छोड़कर, जो शांति और सुव्यवस्था के लिए और सम्राट् की संपत्ति की रक्षा के लिए आवश्यक थे, कुछ भी नहीं बचता था। राजा अपने रत्न-आभूषण-कुंडल, कंगन, मुकुट के रत्न, हार, मालाएं-यहां तक कि कपड़े-लत्ते सब दे डालता। सब दे चुकने पर वह अपनी बहन से एक साधारण पुराना वस्त्र मांगकर उसे पहन लेता और 'दशभूभीश्वर बुद्ध' की उपासना करता और इस बात पर बहुत प्रसन्न रहता कि उसका धन-कोष धर्म-क्षेत्र में खर्च हो गया।'' इधर; सन् 646 ईसवी में हुएनत्सांग चीन वापिस पहुंचा ही था कि सन् 646-47 में इस महान् सम्राट् का देहांत हो गया।

जीवन में उसने अनेक दुःखों और संकटों का सामना किया था। उसका हृदय बहुत संवेदनशील और बुद्धि संतुलित थी। संभवतः यही कारण है कि वह स्वयं साहित्य-रचना की ओर अग्रसर हुआ। हर्षवर्धन संस्कृत का एक प्रतिभाशाली लेखक माना जाता है। उसने **रत्नावली, नागानन्द** और **प्रियदर्शिका** नामक नाटकों की रचना की। संस्कृत साहित्य गद्यकार बाणभट्ट, जिसने **कादंबरी** नामक एक महाकथा लिखकर अपना नाम अमर किया, हर्ष के दरबार में ही था। हर्ष की महत्ता की प्रशंसा में उसने **हर्षचरित्र** नामक ग्रंथ का प्रणयन किया।

हर्ष प्राचीन भारत का अंतिम शक्तिशाली सम्राट् था। वह निरंकुश एकछत्र शासक था। उसकी कीर्ति और प्रभाव दूर-दूर के देशों में पहुंच चुका था। उसकी मृत्यु के एक वर्ष बाद ही, भारत में फिर से राजनैतिक अव्यवस्था उत्पन्न हो गयी। यह अव्यवस्था भारत में सदियों तक बनी रही।...*क्रमशः जारी*

साभार : मुक्तिबोध रचनावली, भाग 6

isd इंस्टीट्यूट फॉर सोशल डेमोक्रेसी

फ्लैट नम्बर-110, नम्बरदार हाउस,

62-ए, लक्ष्मी मार्केट, मुनिरका, नई दिल्ली-110067

टेलीफोन 011-26177904, 46025219 टेलीफैक्स 011-26177904,

ईमेल : notowar.isd@gmail.com / notowar@rediffmail.com / वेबसाइट : isd.net.in

केवल सीमित वितरण के लिए